ISSN : 2319-8567

करभ

वार्षिक हिन्दी पत्रिका

2018

अंक-16

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र
पोस्ट बैग–07, जोड़बीड़, बीकानेर–334 001
(राजस्थान), भारत

भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर
डॉ एन वी पाटिल

करभ

वार्षिक हिन्दी पत्रिका

2018

अंक-16

-: प्रकाशक व संपर्क सूत्र :-

निदेशक

भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र

पोस्ट बैग-07, जोड़बीड़, बीकानेर-334 001 (राजस्थान), भारत

दूरभाष : 0151-2230183

फैक्स : 0151-2970153

ई-मेल : nrccamel@nic.in

वेबसाईट : www.nrccamel.icar.gov.in

करभ

वार्षिक हिन्दी पत्रिका

2018

अंक-16

संरक्षक व प्रकाशक

डॉ. आर.के. सावल

निदेशक

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

प्रधान सम्पादक

डॉ. बसंती ज्योत्सना

वैज्ञानिक एवं प्रभारी राजभाषा

सम्पादक

श्री नेमीचन्द बारासा

सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी

संपादक मंडल

डॉ. एस. डी. नारनवरे, वैज्ञानिक

डॉ. वेद प्रकाश, वैज्ञानिक

डॉ. मु. मतीन अंसारी, वैज्ञानिक

श्री आर. ए. साहू, प्रशासनिक अधिकारी

श्री अशोक यादव, सहायक प्रशासनिक अधिकारी

श्री भरत कुमार आचार्य, सहायक वित्त एवं लेखाधिकारी

श्री राधा कृष्ण वर्मा, तकनीकी अधिकारी

श्री हरपाल सिंह कौंडल, वैयक्तिक सहायक

डॉ. राकेश कुमार पूनियाँ, वरिष्ठ तकनीकी सहायक

नोट :– पत्रिका में प्रकाशित लेखों में विचार, लेखकों के अपने है। इन विचारों के लिए प्रकाशक अथवा 'करभ' पत्रिका का सम्पादक मण्डल किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं है।

मुद्रकः

मै. रॉयल ऑफसेट प्रिन्टर्स, ए 89/1, नारायणा इण्डस्ट्रीयल एरिया, फेस–1, नई दिल्ली–110028

अनुक्रमणिका

क्र. सं.	विषय		पृष्ठ संख्या
1	एन्टीऑक्सीडेन्ट गुणधर्म युक्त सुगंधित उष्ट्र दुग्ध का उत्पादन	देवेन्द्र कुमार, राकेश कुमार पूनियाँ, एन.वी. पाटिल, राघवेन्द्र सिंह	1
2	जोधपुर संभाग में उष्ट्र पालन व्यवसाय में रोजगार एवं निवेश की संभावनाएँ	वेद प्रकाश, बसंती ज्योत्सना, राकेश रंजन, देवेन्द्र कुमार एवं आर.के. सावल	3
3	इंसुलिन हार्मोन : विकार एवं ऊँटनी का दूध	मु.मतीन अंसारी, देवेन्द्र कुमार, राकेश रंजन, शिरीष नारनवरे एवं बसंती ज्योत्सना	10
4	ऊँटनी के दूध के जैव–सक्रिय घटकों का औषधीय मूल्य	गोरख मल एवं बी.सिंह	12
5	जूनोटिक फफूंद रोग	एफ.सी.टुटेजा, एस.डी. नारनवरे, नेमीचंद बारासा एवं आर.के.सावल	14
6	ऊँटों के नवजात बच्चों में मृत्युदर के कारण व प्रबंधन	शिरीष नारनवरे एवं एफ.सी. टुटेजा	17
7	प्रोबॉयोटिक की उपयोगिता : कल, आज और कल	अमिता रंजन, राकेश रंजन एवं लक्ष्मीकांत	21
8	ऊँट के पग	आर.के.सावल एवं मु.मतीन अंसारी	23
9	राज्य पशु : ऊँट	योगेश आर्य, उमेश कुमार प्रजापत, मंगेश कुमार, निर्मला सैनी एवं एच.के.नरूला	26
10	विभिन्न प्रकार के आणविक चिह्नक : एक समीक्षा	बसंती ज्योत्सना, वेद प्रकाश, मु.मतीन अंसारी, शालिनी सुथार एवं रामेश्वर लाल व्यास	28
11	ऊँटों में मदकाल में चोटिल कोमल तालु का शल्य क्रिया द्वारा प्रबंधन	एस.घारू, जी.कोली, एच.के. जेदिया, पी बिश्नोई एवं टी.के.गहलोत	30

क्र. सं.	विषय		पृष्ठ संख्या
12	जल की दुर्लभता एवं समस्याग्रस्त इलाकों में जल संग्रहण करने के परम्परागत तरीके	प्रियंका गौतम, बसंती ज्योत्सना, एम.के.राव एवं बी.लाल	32
13	थार मरुस्थल में खेजड़ी (प्रोसोपिस सिनेरेरिया) का महत्व	बी. लाल, आर.एल. मीणा, प्रियंका गौतम एवं एम.के.राव	37
14	अजोला : पौष्टिक पशु आहार	योगेश आर्य, उमेश कुमार प्रजापत, निर्मला सैनी एच.के. नरूला एवं दिनेश जैन	42
15	खींप संरक्षण आधारित कार्बन खेती से थार मरुस्थल में कार्बन–डाई ऑक्साइड गैस उत्सर्जन में कमी की संभावनाएँ	अमित कुमार व्यास एवं रामेश्वर लाल व्यास	45
16	जे–गेट : वैश्विक ई–जर्नल साहित्य का इलेक्ट्रॉनिक गेटवे	रामदयाल रैगर	48
17	स्वतंत्रता	राजेश कुमार सावल	50
18	मैं भारत हूँ...	श्याम निर्मोही	51
19	आलोचना भी जरूरी है	बबीता	52
20	भारतीय कृषि–प्रौद्योगिकी विकास में बौद्धिक सम्पदा अधिकार	अनुराधा भारद्वाज, दिनेश कुमार, वारिज नयन, पार्वती शर्मा, यशपाल एवं भूपेन्द्र नाथ त्रिपाठी	54
21	उष्ट्र के चमड़े के गुण	राजेश कुमार सावल	62
22	कृषि और पशुपालन संबंधित विभिन्न उपयोगी मोबाइल एप्प	वेद प्रकाश, बसंती ज्योत्सना, गजानन्द, नेमीचंद बारासा, एवं आर.के. सावल,	64
23	पशुओं में नेतृत्व क्षमताः थार रेगिस्तान में ऊँट पर अध्ययन	विनोद कुमार यादव, आर.के. सावल, राधाकृष्ण वर्मा, एवं शिल्पा यादव	69
24	पर्यावरण संरक्षण और भारतीय चिंतन	गौरव बिस्सा	71
25	केन्द्र की राजभाषा गतिविधियाँ		73
26	राजभाषा कार्यशालाएं		77

संरक्षक की कलम से...

डॉ. आर.के. सावल

ऊँट एक विशालकाय पशु है जो अपनी अनूठी विशेषताओं के कारण आज भी प्रासंगिक है। इस मशीनी युग में भी ऊँट अपनी उपयोगिता एवं महत्व को स्तरीय व गतिमान बनाए हुए हैं। इस प्रजाति की शारीरिक संरचना जहां आमजन में कौतूहल जगाती है वहीं अनुसंधानकर्ताओं में नए–नए अन्वेषण हेतु उत्सुकता जगाती है। प्रदेश की विषम परिस्थितियों में मानव सभ्यता के विकास में महत्ती योगदान देने वाला यह प्राणी मानों इस बात की मांग भी करता है।

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र ऊँट के विकास एवं संरक्षण हेतु प्रतिबद्ध है। केन्द्र का ऊँट के विभिन्न पहलुओं से सम्बन्धित ठोस आंकड़ा कोष इस बात का परिचायक है कि ऊँट एक विशेष महत्व वाला प्राणी है। केन्द्र ने पिछले डेढ़ दशक से ऊँटनी के दूध को अनुसंधान के एक ठोस आधार के रूप में चुना। केन्द्र तथा वैश्विक स्तर पर हुए अनुसंधान इस बात की पुष्टि करते हैं कि ऊँट मानव को स्वास्थ्य लाभ की दृष्टि से भी एक सौगात है। वैज्ञानिक अनुसंधानों ने जहां उष्ट्र महत्व की परिधि को व्यापक बनाया है वहीं केन्द्र के व्यावहारिक प्रयास दूध से जुड़ी तमाम भ्रांतियों पर विराम लगाते हुए एक सामाजिक जुड़ाव उत्पन्न कर रहे हैं ताकि ऊँट पालक व किसान भाई उष्ट्र पालन व्यवसाय को नए विकल्प व संभावनाओं के रूप में अपनाकर अपनी आमदनी में आशातीत वृद्धि कर सकें।

केन्द्र द्वारा अपनी समस्त वैज्ञानिक उपलब्धियों व तकनीकी ज्ञान को विभिन्न प्रचार–प्रसार माध्यमों द्वारा सरल व सुलभ तौर पर विविध रूपों में रखा जाता है। इस हेतु राजभाषा पत्रिका करभ, लघु पुस्तिकाओं, विस्तार–पत्रकों, पैम्पलेट आदि के माध्यम से वैज्ञानिक जानकारी उपलब्ध करवाई जाती है ताकि वैज्ञानिक ज्ञान व नूतन तकनीकी का शीघ्र व सीधा लाभ ऊँट पालकों व किसानों भाइयों को मिल सके।

केन्द्र की राजभाषा पत्रिका 'करभ' के 16 वें अंक के प्रकाशन पर मैं हर्षित व गौरवान्वित महसूस कर रहा हूँ। केन्द्र के वैज्ञानिकों, अधिकारियों, कर्मचारियों एवं अन्य लेखक गणों के समन्वित प्रयास से यह प्रकाशन आपके समक्ष प्रस्तुत है। ये सभी बधाई के पात्र हैं। करभ पत्रिका में ऊँटों आदि के विभिन्न पहलुओं से सम्बन्धित आलेख सार्थक रूप में अपनी प्रभाविता सिद्ध कर सके, इसी अभिलाषा व शुभ कामनाओं के साथ।

(आर.के. सावल)
निदेशक

प्राक्कथन

डॉ. बसंती ज्योत्सना

भाषा, मानव सभ्यता में जुड़ाव उत्पन्न करने का सबसे सशक्त माध्यम मानी जाती है। परस्पर जुड़ाव की यह स्थिति नित नए अवसर प्रदान करती हैं। इसके कारण मानव जीवन गतिमान होकर अपने प्रयोजन हेतु सदैव प्रयत्नशील बना रहता है।

संसार के अलग–अलग देशों में विविध बोलियां–भाषाएँ अभिव्यक्ति के तौर पर प्रयुक्त की जाती हैं। अपनी विलक्षण विशेषताओं एवं महत्व के आधार पर ये अपना प्रसार पाती हैं। भारत देश में हिन्दी भाषा सर्वाधिक लोगों द्वारा बोली जाने वाली एक ऐसी जनभाषा है जो अपने सरल व सहज गुणों के कारण तेजी से प्रसार पा रही है। यह भाषा अपनी ठोस वैज्ञानिकता के कारण भी भाषाई दृष्टिकोण से अपना मजबूत पक्ष रखती है तथा किसी भी प्रकार से प्रतिस्पर्द्धा की स्थिति उत्पन्न नहीं करती है, शायद इसीलिए परिवर्तित परिवेश में भी यह सुरक्षित व आशान्वित है।

हिन्दी भाषा विविध स्वरूपों में अपनी उपयोगिता को सिद्ध कर रही है। साहित्य, ज्ञान व विज्ञान आदि क्षेत्रों में इस भाषा ने नए अवसरों को तलाशा है, इन्हीं गुणों के कारण यह आज गतिमान है। यह केन्द्र एक अनुसंधान क्षेत्र से सम्बद्ध है तथा भाषाई परिप्रेक्ष्य में भी इस बात का विशेष महत्व है कि वैज्ञानिक अनुसंधान विषयों को आमजन के समक्ष रखा जाए। भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र की ओर से प्रकाशित राजभाषा वार्षिक पत्रिका 'करभ' ऊँटों पर की गई हर वैज्ञानिक खोज को ऊँट पालकों से साझा करने का एक मंच है। साथ ही सतत प्रकाशित की जाने वाली विविध प्रचार–प्रसार सामग्री उष्ट्र पालन व्यवसाय के प्रति जन चेतना लाने का कार्य कर रही है।

केन्द्र की राजभाषा वार्षिक पत्रिका 'करभ' के इस प्रकाशन में वैज्ञानिकों, अधिकारियों, कार्मिकों तथा साहित्य प्रेमियों ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इस हेतु सभी का बहुत–बहुत आभार। पाठकों को यह अंक उपयोगी व रूचिकर लगेगा, इसी आशा व विश्वास के साथ।

ब० ज्योत्सना

(बसंती ज्योत्सना)
प्रभारी राजभाषा

एन्टीऑक्सीडेन्ट गुणधर्म युक्त सुगंधित उष्ट्र दुग्ध का उत्पादन

देवेन्द्र कुमार[1], राकेश कुमार पूनियाँ[2], एन.वी.पाटिल[3], राघवेन्द्र सिंह[4]

[1]वैज्ञानिक, [2]वरिष्ठ तकनीकी सहायक [3]निदेशक, [4]प्रधान वैज्ञानिक

[1,2]भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

[3]भाकृअनुप–केन्द्रीय गोवंश अनुसंधान संस्थान, मेरठ

[4]भाकृअनुप–केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान, अविकानगर

शुष्क क्षेत्र में पशुपालकों का झुकाव आज भी कही ना कही उष्ट्र पालन की तरफ शेष है। इसका प्रमुख कारण उष्ट्र की इस क्षेत्र में सहज रूप से रहने की क्षमता, पर्यटन में इसकी उपयोगिता तथा गुणवता युक्त दूध देने की क्षमता हैं। आजकल दूध उत्पादन उष्ट्रपालन का प्रमुख आधार बनता जा रहा है। उष्ट्र दूध में विभिन्न विशिष्ट घटकों की मौजुदगी के कारण यह कार्यात्मक व जैविक गुणधर्मों में अन्य दूधारू पशुओं के दूध से बेहतर स्वास्थ्य हेतु महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है। गौरतलब है कि ऊँटनी के दूध की स्वीकार्यता के सम्बन्ध में देश व समाज में निराधार भ्रांतियां व्याप्त थी परन्तु एफ.एस.एस.ए.आई. द्वारा ऊँटनी के दूध को मान्यता देने के उपरान्त यह समस्या काफी हद तक समाप्त हो चुकी है व अब इस दूध की बिक्री भी निर्बाध की जा सकेगी।

वैसे तो ऊँटनी का दूध मधुमेह, हेपेटाइटिस, क्षय रोग के साथ साथ ऑटिज्म विकार के प्रबन्धन में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। परन्तु उष्ट्र दूध में मौजूद उच्च एन्टीऑक्सीडेन्ट गुणधर्म के कारण यह ऑक्सीडेटिव स्ट्रेस से पनपे फ्री रेडिकल्स को शांत कर जैविक तन्त्र में उत्पन्न हुई असमानता को सामान्जस्य में लाने में सहायक होता हैं। साथ ही साथ पाचन तन्त्र में उष्ट्र दूध में मौजूद प्रोटीन्स का प्रोटियोलाइटिक एन्जाइमों द्वारा विघटन तथा किण्वन के कारण यह एन्टीऑक्सीडेन्ट गुणधर्म और बढ़ जाता है। उष्ट्र दूध में मौजुद इस गुणधर्म को एन्टीऑक्सीडेन्ट मात्रा युक्त फल उत्पादन मिलाकर और ज्यादा बढ़ाया जा सकता है तथा इस दूध का कार्यात्मक दूध उत्पाद बनाया जा सकता है। फल वैसे ही एन्टी ऑक्सीडेन्ट गुण लिए हुए होते हैं जो कई बार ऑक्सीडेटिव स्ट्रेस को कम करने में मददगार होते हैं। फलों में यह विशेषता उनमें मौजूद न्यूट्रास्यूटिकल जैसे पॉलीफिनोल, कैरोटिनोइडस, स्टीरॉल्स, सेपोनिनस, टरपिन्स व विटामिन के कारण होती है।

एन्टीऑक्सीडेन्ट युक्त सुगंधित उष्ट्र दूध बनाने के लिए फल के रूप में चीकू को प्रयोग में लिया गया। चीकू को साफ कर इनके बीजों को निकाला गया तथा इसे –20° सेन्टीग्रेड पर फ्रीज में रखा गया। इसमें जमने के उपरान्त इसके गुदे को फ्रीज ड्राइर की सहायता से निर्जलीकृत किया गया। इस निर्जलीकृत उत्पाद को मिक्सर की सहायता से पिसाई कर इसे पॉलीबैग में डालकर अग्रिम उपयोग तक फ्रीज में भण्डारित कर लिया गया।

केन्द्र की उष्ट्र डेयरी से प्राप्त दूध को 5 मिनट तक गर्म किया गया तथा क्रीम सेपरेटर की सहायता से इसमें से वसा को अलग कर लिया गया। इस प्रकार प्राप्त उष्ट्र दूध में वसा की मात्रा 0.5 से भी कर ली गई। इस वसा रहित दूध को गर्म करते हैं। इसी समय इसमें 4 प्रतिशत शर्करा व चीकू का पाउडर तीन भिन्न–भिन्न मात्राओं (3, 5, व 7 प्रतिशत) में डाला गया। इस प्रकार बने दूध को 5° सेन्टीग्रेड तक ठण्डाकर पॉलीबैग में भर लिया गया तथा इसका सवेंदी, भौतिक रसायनिक व सुक्ष्मजीवीय परीक्षण किये गए। इन सभी परिणामों के आधार पर पाया गया कि 5 प्रतिशत चीकू पाउडर की मात्रा वाला सुगन्धित दूध स्वीकार्यता के हिसाब से बेहतर था।

भारत में घटती उष्ट्र संख्या को रोकने के लिए वैज्ञानिको द्वारा उष्ट्र दूध को लोकप्रिय बनाना तथा इसको प्रभावी उपयोग के लिए पशुपालकों व संबंधित समुदाय को जागरूक करना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। अतः इस प्रकार के मूल्य सवंर्धित उत्पाद बनाकर ही उष्ट्र व उष्ट्र पालकों के भविष्य को कुछ हद तक सुनिश्चित किया जा

सकता है। इस प्रकार अनुसंधान की वैज्ञानिक उपलब्धियाँ, उष्ट्र दूध से अन्य मूल्य सवंर्धित उत्पादों के निर्माण का मार्ग प्रशस्त करती है। इससे न केवल मानव स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा बल्कि ऊँट व ऊँट पालक का जीवन भी खुशहाल बनाया जा सकेगा।

ऊँटनी का दूध औषधीय गुणधर्मों से भरपूर होता है। ऊँटनियों के दूध का स्वाद नमकीन होता है जो कि मरूस्थलीय चरागाहों तथा लवणीय पौधों आदि में वृक्षों, वनस्पति पर चरने के कारण होता है। परंतु विभिन्न मानव रोगों के प्रबंधन में इसकी भूमिका अहम साबित हुई हैं। इसके लाभदायक गुणों के कारण ही प्राचीन समय से इसका पारंपरिक उपयोग किया जाता रहा है। आधुनिक युग में वैश्विक स्तर पर इसका प्रचलन तेजी से बढ़ रहा है। भारत में भी आज कई निजी एजेंसियां ऊँटनी के दूध से विभिन्न उत्पाद तैयार कर आमजन के समक्ष परोस रही हैं। परंतु लगभग डेढ़ दशक पूर्व यहां ऊँटनी के दूध के प्रति इतनी जागरूकता नहीं थी जितनी की आज है। इसके लिए भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र के वैज्ञानिक अनुसंधानों ने महत्ती भूमिका निभाई है। केन्द्र सतत रूप से प्रयत्नशील रहा है, कि उष्ट्र प्रजाति के संरक्षण व विकास हेतु ऊँटनी का दूध रूपी यह विकल्प समाज में अपना स्थान कायम कर सके। इस हेतु केन्द्र ने उष्ट्र दुग्ध पार्लर, उष्ट्र डेयरी, विभिन्न महत्वपूर्ण मेला आदि अवसरों पर इस दूध की महत्ता को आमजन के समक्ष रखा। केन्द्र द्वारा स्थापित उष्ट्र डेयरी जहां कौतूहल का विषय बनीं वहीं पार्लर पर इस दूध से तैयार स्वादिष्ट उत्पादों ने आमजन का ध्यान अपनी ओर खींचा।

चीकू फलयुक्त सुगंधित उष्ट्र दुग्ध

जोधपुर संभाग में उष्ट्र पालन व्यवसाय में रोजगार एवं निवेश की संभावनाएँ

वेद प्रकाश[1], बसंती ज्योत्सना[1], राकेश रंजन[2], देवेन्द्र कुमार[1] एवं आर.के.सावल[3]

[1]वैज्ञानिक, [2]प्रधान वैज्ञानिक, [3]निदेशक

[1,2,3]भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

कुल 3.8 लाख ऊँटों की आबादी के साथ विश्व में भारत का दसवां स्थान है। भारत में ऊँट मुख्य रूप से राजस्थान (81.4 प्रतिशत), गुजरात (7.6 प्रतिशत), हरियाणा (4.7 प्रतिशत), बिहार (2.2 प्रतिशत) तथा उत्तरप्रदेश (2.0 प्रतिशत) में पाये जाते हैं। राजस्थान की कुल ऊँट आबादी 3.26 लाख है जिसमें से लगभग 1.27 लाख जोधपुर संभाग में पाये जाते हैं जो कि राजस्थान के कुल ऊँट आबादी का 39 प्रतिशत है (तालिका 1)। ऊँट आबादी की बहुलता जोधपुर संभाग को ऊँट आधारित उद्योग के लिए अनुकूल बनाती है।

तालिका–1 जोधपुर संभाग में ऊँट की आबादी तथा उसका राजस्थान की ऊँट आबादी में योगदान (2012 पशुगणना के आधार पर)

क्र. सं.	जिला	नर	मादा	कुल आबादी
1	बाड़मेर	19020	24152	43172
2	जैसलमेर	17490	32427	49917
3	जालौर	1975	3139	5114
4	जोधपुर	7736	9013	16749
5	पाली	3384	4969	8353
6	सिरोही	1025	3096	4121
7	राजस्थान	147 445	178268	325713
8	जोधपुर संभाग	50630	76796	127426
राजस्थान की कुल आबादी में जोधपुर संभाग		34.34 प्रतिशत	43.08 प्रतिशत	39.12 प्रतिशत

ऊँट एक बहुउपयोगी पशु है और इसका उपयोग दूध एवं दूध के उत्पाद, चमड़ा, बाल, हड्डी के उत्पाद बनाने के लिए किया जा सकता है। इसके अलावा इसके गोबर का उपयोग किया जा सकता है। इन जानवरों को इको–पर्यटन तथा दौड़ के लिए उपयोग में लाया जा सकता है। ऊँट से संबंधित विभिन्न निवेश संभावनाओं में से दूध एवं दूध उत्पाद आधारित व्यवसाय सबसे अच्छा निवेश का जरिया प्रतीत होता है क्योंकि ऊँट के दूध की विशिष्ट प्रकृति होती है जो रेगिस्तान के औषधीय गुण वाले पेड़–पौधों के खाने से आती है। ऊँट के दूध में गोवंश की तुलना में कम वसा, प्रोटीन एवं कुल ठोस लेकिन ज्यादा नमक एवं प्रोटेक्टिव प्रोटीन होते हैं। गुजरात एवं राजस्थान के कुछ भागों में ऊँट दूध का व्यवसायीकरण हो रहा है और यहां दूध प्रतिस्पर्द्धात्मक कीमतों पर बेचा जा रहा है। दूध की बिक्री से होने वाले आमदनी भी अधिक हो रही है। अनेक अनुसंधान उष्ट्र दूध के औषधीय गुणों को प्रमाणित करते हैं। बीकानेर मेडिकल कॉलेज एवं राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र के शोध ने ऊँट के दूध को टाइप–एक मधुमेह के रोग के उपचार में कारगर पाया हैं। ऊँट की दूध उत्पादन क्षमता पर भी अब अध्ययन किया गया है और यह पाया गया है कि कठिन वातावरण में ऊँट अन्य दूधारू प्रजातियों से ज्यादा दूध उत्पादन कर सकता है। ऊँट दूध के औषधीय गुण के कारण इसकी बाजार में अच्छी कीमत मिल रही हैं। अकाल की परिस्थितियों को ऊँट अन्य पशुओं की तुलना में अच्छी तरह बिना उत्पादन में गिरावट झेल सकता है। रेगिस्तान के वातावरण में इसमें अन्य पशुओं की तुलना में अधिक तथा लम्बे समय तक दूध उत्पादन करने की क्षमता है जबकि इसकी चारे की जरूरत सामान्य ही होती है।

ऊँट के दूध से कई उत्पाद आसानी से बनाए जा सकते हैं। ताजा एवं किण्वित दूध से उपयोगकर्ताओं को कई स्वास्थ्य संबंधी लाभ होता हैं। इसके अलावा अन्य उत्पाद जैसे हड्डी, चमड़ा, गोबर एवं बाल पूरक आमदनी के स्रोत हो सकते हैं।

ऊँट दूध

यह प्रायः सफेद, झागदार एवं हल्का नमकीन स्वाद का होता है। इसमें कम मात्रा में वसा होता है। वसा अन्य प्रजातियों की अपेक्षा अधिक अनुपात में अनसैचुरेटेड फैटी एसिड पाये जाते हैं। यह आयरन, कॉपर, मैगनीज आदि तत्वों से भरपूर होता है। इसमें कैल्शियम व फास्फोरस का अनुपात 1:5 का होता है जो कि नवजात शिशुओं के लिए दूध आधारित पूरक खाद्य पदार्थ बनाने में सहायक सिद्ध होता है। इसमें नियासीन एवं विटामिन 'सी' जैसे विटामिन अधिक मात्रा में पाया जाते हैं। इस दूध को रोटा वायरस की वृद्धि रोकने में प्रभावकारी पाया गया है। कजाकिस्तान में बनाए जाने वाले किण्वित दूध शुवाट में वायरस प्रतिरोधक क्षमता देखी गई है। इसके अलावा इसे हेपाटाइटिस 'सी' वायरस को शरीर में प्रवेश करने से रोकने में मददगार पाया गया है। इसमें कई जीवाणुओं से लड़ने की क्षमता पाई गई है। ऊँट दूध के विशिष्ट गुण जैसे इन्सुलिन या इन्सुलिन जैसे पदार्थ की मौजूदगी, छोटे आकार के इम्यूनों ग्लोबलिन्स का बीटा–कोशिकाओं पर प्रभाव तथा मनुष्य के पेट में दूध नही जमने के कारण इसे टाईप–1 डायबटीज के उपचार के लिए मनुष्यों में प्रभावी पाया गया है। इसे गोवंश दूध से एलर्जी से ग्रसित बच्चों के लिए भी उपयोगी पाया गया है। इसमें क्लोस्ट्रॉल कम करने की क्षमता देखी गई है। कुल मिलाकर उष्ट्र दूध मानव खाद्य श्रृँखला में अहम योगदान दे सकता है, अगर इसका मानव उपभोग हेतु व्यावसायीकरण किया जाए।

जोधपुर संभाग में संभावित दूध उत्पादन

2012 की पशुगणना के अनुसार जोधपुर संभाग में कुल 52000 वयस्क मादा ऊँट है। अगर इसमें से 50 प्रतिशत भी दूध दे रही हो तो प्रतिदिन प्रतिऊँट 4 लीटर उत्पादन के हिसाब से प्रतिदिन लगभग 1 लाख लीटर ऊँट दूध का उत्पादन किया जा सकता है। गुजरात में कुछ संगठनों के द्वारा 50 रुपये लीटर दूध बेचा जा रहा है। इस मूल्य के आधार पर प्रतिदिन 50 लाख रुपये का ऊँट दूध व्यवसाय इस संभाग में किया जा सकता है। वे लोग जो मधुमेह, आटिज्म या अन्य बीमारियों से पीड़ित है, उनको ऊँट दूध के ग्राहक के रूप में चिन्हित किया जा सकता है। 2015 में प्रकाशित एक आँकड़े के अनुसार भारत में 69.2 मीलियन लोग (8.7 प्रतिशत पूरी आबादी का) मधुमेह से ग्रसित है। इसमें 90 प्रतिशत लोग टाइप–2 मधुमेह से ग्रसित है और इनके शरीर में इंसुलिन का निर्माण होता है। लेकिन टाइप–1 डायबीटिज से पीड़ित लोग खुद से इंसुलिन नहीं बना सकते हैं और उन्हें जिन्दा रहने के लिए इंसुलिन का इंजेक्शन लेना पड़ता है। टाईप–1 डायबिटीज के प्रबंधन में ऊँट का दूध उपयोगी साबित हो चुका है। अगर टाइप–1 डायबिटीज से पीड़ित 10 प्रतिशत रोगी (लगभग 70 लाख) लोग को आधा लीटर प्रतिदिन के हिसाब से दूध उपलब्ध कराया जाए तो प्रतिदिन 35 लाख लीटर ऊँट दूध की जरूरत पड़ेगी। जो कि हमारी उत्पादन क्षमता से कहीं अधिक है। इस दूध की मांग एवं आपूर्ति के अंतर को देखते हुए ऊँट दूध में व्यापार निवेश का उत्तम मौका साबित हो सकता है। आजकल यह दूध 50–120 रुपये प्रति लीटर के हिसाब से आपूर्ति के स्थान एवं भेजने के खर्च के अनुसार बिक रहा है। यह बाजार भाव भेजने के स्थान एवं अन्य संबधित खर्च के उपर आधारित है।

जोधपुर संभाग इस व्यवसाय का नेतृत्व कर सकता है क्योंकि संभाग में राजस्थान के 40 प्रतिशत ऊँट पाये जाते हैं। क्योंकि ग्राहक ऊँट दूध को औषधि के रूप में लेता है। अतः उनकी आशा होती है कि व्यापारी उन्हें साफ–सुथरा अच्छी पैकेजिंग में तथा सही समय पर दूध पहुंचाएं। जिसके लिए आधुनिक डेयरी एवं दूध प्रसंस्करण इकाई की स्थापना की जरूरत है। अतः ऊँट दूध व्यवसाय जोधपुर संभाग में निवेश की बड़ी संभावना पैदा करता है।

मूल्य संवर्धित उष्ट्र दूध उत्पाद

उष्ट्र दूध से कई उत्पाद जैसे दूध पाउडर, कुल्फी, गुलाब जामुन, पनीर, आइसक्रीम, सुगन्धित दूध एवं किण्वित दूध इत्यादि बनाये जा सकते हैं। इन उत्पादों का स्वाद एवं भंडारण अवधि गाय एवं भैंस के दूध से बने उत्पाद जैसा है। लेकिन इसमें स्वास्थ्य संबंधी लाभ भी होता है।

प्रसंस्करण इकाई लगाकर ऊँट दूध से ज्यादा लाभ कमाया जा सकता है। डेयरी उत्पाद जैसे कुल्फी, लस्सी, चाकलेट इत्यादि बनाने की इकाई की स्थापना भी निवेश के अच्छे मौके इस संभाग में पैदा करता है। राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर में ऊँट लस्सी, चीज, सुगन्धित दूध, चाय, काफी, आइसक्रीम, गुलाब जामुन, पेड़ा इत्यादि दूध के उत्पादों को बनाने की तकनीक विकसित हुआ है और ये सारी तकनीक व्यावसायीकरण के लिए उपलब्ध है।

ऊँट दूध पाउडर

यह एक ऐसा उत्पाद जो दूध के व्यापार के दायरे को बढ़ा सकता है। दूध की संचयन काल को यह काफी लम्बा कर सकता है। आज दूध पाउडर बनाने की तकनीक एवं उसके बनाने के लिए प्रयोग में लाये जाने वाले संयंत्र दोनों विकसित किये जा चुके हैं। इस तरह के संयन्त्र की स्थापना जोधपुर संभाग में करके दूध के ट्रांसपोर्ट पर आने वाले खर्चे को कम किया जा सकता है। फिलहाल पाउडर

निर्माण की अधिकांश इकाई गुजरात के बड़ौदा में स्थित है जबकि ऊँट दूध उत्पादन ज्यादात्तर राजस्थान में होता है। ऐसे में पाउडर बनाने के लिए राजस्थान से गुजरात दूध ले जाने की जरूरत पड़ती है। क्योंकि दूध खराब होने वाली वस्तु है। इसलिए उसे शीतकृत वाहन, से जल्द से जल्द ले जाने की जरूरत पड़ती है जिससे पाउडर की कीमतें बढ़ती है जिसके फलस्वरूप अपनी विशेषताओं के बाद भी यह प्रक्रिया ज्यादा लोकप्रिय नहीं हो पा रहा है। ऐसे में इस संभाग में दूध पाउडर संस्करण इकाई की स्थापना काफी मुनाफे का सौदा हो सकता है। साथ ही दूध विक्रेताओं को भी उनके व्यापार के दायरें को बढ़ाने में मदद कर सकता है। आज ऊँट दूध विक्रेता पैकेंजिंग की जरूरतों तथा खराब होने के डर से दूर बैठे ग्राहकों के साथ ठीक ढंग से व्यापार नहीं कर पाता है। साथ ही दूध को दूर भेजने की लागत में भी वृद्धि होती है। ग्राहक द्वारा दूध खराब होने के कारण वापस लौटाये जाने का डर भी हमेशा बना रहता है। ऐसे परिस्थिति में पाउडर का निर्माण एवं उसके व्यपार के दूरगामी परिणाम हो सकते हैं। इन संभावनाओं को देखते हुए ऊँट दूध पाउडर आधारित लघु उद्योग जैसे कि ऊँट पाउडर निर्माण के लिए संयंत्र की स्थापना तथा ऊँट पाउडर की बिक्री में निवेश की असीम संभावना है।

ऊँट की गोबर

ऊँट का गोबर एक महत्वपूर्ण खाद है। ऊँट के गोबर की उर्वरकता शक्ति बकरी या भेड़ के गोबर जितनी नहीं होती है लेकिन गाय के गोबर से अच्छा होती है। इसका प्रभाव धीरे होता है और इसके विघटन में लम्बा समय लगता है। यह तीन साल तक टिकता है। इसका उपयोग खाद एवं कागज बनाने के लिए किया जा सकता है।

ऊँट के गोबर की खाद को ईंधन के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। ऊँट के गोबर को पूरी तरह जलने में (7–8 घंटे) दूसरे जानवरों के तुलना में अधिक लगता है। इसके अलावा इसके जलने से कम धुआं उत्पन्न होता है। ग्रामीण इलाकों में इसका प्रयोग हुक्का में लोग करते हैं। साथ ही कुछ देशों में इसका उपयोग सिगार में भी करते हैं। अतः गोबर को इस प्रकार के उपयोग में लाने हेतु भी लघु उद्योग की शुरूआत की जा सकती है और मुनाफा कमाया जा सकता है।

आज जब जैविक खेती की ओर समाज अग्रसर है, तो गोबर को जैविक खाद के रूप में भी इस्तेमाल कर सकते हैं। ऊँट के गोबर में गाय और भेड़ की खाद की तुलना में अधिक मात्रा में पौटाशियम तथा जैविक कार्बन होता है। ऊँट के मूत्र में जिंक, कोबाल्ट, लोहा, पोटाशियम, सोडियम जैसे तत्व गाय एवं भेड़ के मूत्र से ज्यादा होते हैं। शोधों के द्वारा यह प्रमाणित किया जा चुका है। गाय/भेड़ से बने खाद की तुलना में दुगनी मात्रा में उपयोग करने पर इसका प्रभाव गाय/भेड़ के गोबर से बने खाद जैसा होता है। इसके अलावा ऊँट से बने कम्पोस्ट खाद का उपयोग बजंर जमीन के सुधार हेतु भी किया जा सकता है। इसका उपयोग ऊँची मात्रा में कैल्शियम होने के कारण अम्लीय/अम्ल फास्फेट बहुल मिट्टी के सुधार में भी किया जा सकता है। बंजर मिट्टी के पुर्नरूत्थान के लिए यह जिप्सम का अच्छा विकल्प हो सकता है। इन विशेषताओं को देखते हुए ऊँट के गोबर पर आधारित जैविक खाद प्रसंस्करण की इकाई की स्थापना इस क्षेत्र में की जा सकती है।

ऊँट के गोबर से कागज बनाये जा सकते हैं। इन कागजों पर राजस्थानी कला को उकेर कर राज्य में आने वाले सैलानियों को सोवेनियर आइटम के रूप में बेचा सकता है। इसके अलावा डायरी, पेपर मेस कटोरी, ग्रीटींग कार्ड इत्यादि भी बनाया जा सकते है। ऊँट के गोबर पर आधारित यह लघु उद्योग एक अच्छा निवेश का मौका इस संभाग में हो सकता है।

ऊँट के चमड़े एवं खाल

ऊँट के चमड़े का उपयोग जूते एवं चप्पल बनाने में किया जा सकता है। ऊँट के चमड़े से पानी एवं दूध रखने के लिए बर्तन बनाये जाते हैं। इसके चमड़े का उपयोग बैग, बेल्ट, जूते, उपहार के डब्बे, मोबाइल कवर, फोल्डर–सोल्डर बैग इत्यादि बनाने के लिए किया जा सकता है। दुबई में उष्ट्र चमड़े से बने हैंड बैग की शुरूआती कीमत लगभग 3650 दिनार (डरहम) होती है। ऊँट के चमड़े में गाय के चमड़े से ज्यादा टीयर स्ट्रेंथ होता है, जो इसे अधिक टिकाऊ बनाता है। ऊँट की खाल 2–3 मिमी. मोटी होती है। प्राकृतिक रूप से मौजूद दाने ऊँट के चमड़े का एक

विशिष्ट गुण होता है। ये दाने वयस्क जानवरों में अधिक होते है। ऊँट के चमड़े में गाय/भैंस के चमड़े से 10 गुणा ज्यादा रेशे होते हैं जो इसे मुलायम और सबल होने के बावजूद भी ज्यादा मजबूत बनाते है। ऊँट के चमड़े एवं खाल की इन विशेषताओं तथा अन्य देशों में इससे मिलने वाली अच्छी कीमत ऊँट के चमड़े एवं खाल आधारित उद्योग में काफी संभावनाएं रखता है। इस क्षेत्र में निवेश निश्चय ही लाभकारी हो सकता है।

ऊँट के हड्डी एवं दाँत

हड्डी एक लम्बा टीकने वाली वस्तु है। इसलिए इससे उपयोग एवं सजावट की सुंदर एवं टिकाऊ वस्तुएं बनाई जा सकती हैं। अधिकांश इलाकों में हाथी की हड्डी प्रतिबंधित है और ऐसे में ऊँट की हड्डियाँ उसका अच्छा विकल्प है। ऊँट के हड्डी से बनी वस्तु हाथी दांत से बनी वस्तुओं से काफी मिलती–जुलती है। इसकी हड्डियों का सामान बनाकर एवं बेचकर यहां के स्थानीय लोग आज भी जीवन यापन करते हैं। मरे हुए ऊँट के मांस के डिकम्पोजिसन के बाद उसकी हड्डियां जमा की जाती है। जिसे साफ कर एवं उबालकर कई उपयोगी हैंडीक्राफ्ट के सामान बनाये जाते हैं। एक समय संयुक्त अरब अमीरात में गहने मुख्य रूप से ऊँट की हड्डियों एवं दाँतों से बनाए जाते थे। ऊँट की हड्डी के अलावा इसके दातों का उपयोग भी कई तरह के सजावट एवं ज्वैलरी की वस्तुएं बनाने के लिए किया जाता है। इन हड्डियों के ऊपर डिजाइन का काम आज भी पाकिस्तान, राजस्थान एवं इरान में किया जाता है। इस कला को विदेशों में काफी सराहा गया है। एक लैम्प बनाने में लगभग 100 हड्डी के टुकड़ों का उपयोग होता है और उसकी कीमत लगभग दस से पंद्रह हजार तक होती है।

ऊँट के हड्डी एवं दाँत आधारित व्यवसाय पारंपरिक कारीगरों द्वारा आज भी किया जा रहा है। साथ ही

आधुनिकीकरण के दौर में इसकी पहचान दूर–दूर तक फैली है। ऐसे में इस उद्योग में और पूँजी लगाकर इसे बड़े पैमाने पर करने की जरूरत है। जिससे इस उद्योग को बल मिलेगा साथ ही पारंपरिक कारीगरों के ज्ञान को भी नई पहचान मिलेगी। इस क्षेत्र में पूँजी निवेश करके मुनाफा कमाने की असीम संभावना है।

ऊँट के हड्डियों से जेलाटीन का उत्पादन आज निवेश की नई संभावनाएँ पैदा कर रहा है। यह कचरें से संपति (वेस्ट टू वेल्थ) निर्माण एवं कचरे को कम करने का माध्यम सिद्ध हो सकता है। भैंस एवं सूअर से प्राप्त जेलाटीन की स्वीकार्यता एलर्जी तथा धार्मिक परंपरा के कारण से कम हो रही है। इसके कारण दूसरे स्रोतों से जेलाटीन की उत्पादन की माँग बढ़ रही है। इसलिए ऊँट के हड्डियों से जेलाटीन का उत्पादन व्यवसाय का रूप ले सकता है और इसमें निवेश करके अच्छी कमाई की जा सकती है।

ऊँट के बाल

ऊँट के बालों का उपयोग प्राचीन काल से ऊँट पालने वाली जातियों द्वारा रस्सी, कम्बल, दरी, बैग, गद्दे इत्यादि बनाने के लिए राजस्थान एवं गुजरात में किया जा रहा है। इसके बाल को दूसरे धागों के साथ मिलाकर कोट, स्वेटर, अंडरवियर इत्यादि के लिए उपयुक्त फैब्रिक बनाया जा सकता है। लम्बे खुरदरे बालों से गलीचे बनाये जा सकते हैं। ऊँट के बाल टिकाऊ, मजबूत एवं कम कंडेक्टीविटी वाला होता है। यह भी प्रमाणित किया जा चुका है कि 620 ग्राम ऊँट के बाल 900 ग्राम भेड़ ऊन के बराबर गर्मी पैदा करते हैं। ऊँट के बालों को ऊन, सिल्क तथा पॉलीस्टर के साथ मिश्रण के परिणाम काफी सकारात्मक पाए गए हैं।

औसत ऊन उत्पादन बीकानेरी, जैसलमेरी तथा कच्छी नस्लों में क्रमशः 1.04, 0.80, तथा 0.68 कि.ग्रा. दर्ज की गई है। ऊँट के बालों का औसत व्यास 27–38 माइक्रोन, रेशे की लंबाई 5.1 से 6.7 से.मी. होती है। पारंपरिक बुनकर एक किलो धागा बनाने के लिए लगभग 15 रुपये तथा दरी एवं कम्बल बनाने के लिए लगभग 40 रुपये प्रति किलो मेहताना लेते थे। इससे बने दरी तथा कम्बल सस्ते तथा लम्बे टीकने वाले होते थे। एक अध्ययन के अनुसार लगभग 46 ऊँट वाले फार्म में 12 प्रतिशत आमदनी ऊँट के बालों से होती है। ऊँट के टोरडियों के बालों से होजरी के धागे बनाये जा सकते हैं। ऊँट एवं ऊँट के बालों के मिश्रण से बने उत्पाद बनाने की तकनीक विकसित हो चुकी है। क्योंकि राजस्थान एवं उसके आस–पास के राज्यों में अच्छी संख्या में ऊँट पाए जाते हैं और सालाना 3–4 लाख किलो ऊँट उपलब्ध हो सकती है। ऊँट के बाल लगभग 45 रुपये प्रति किलों के भाव से मिल जाते हैं जबकि ऊन 60 रुपये प्रति किलो मिलता है। इससे बना हुआ गलीचा सस्ता होता है। इस संभाग में लगभग 1.27 लाख ऊँट है जिससे सालाना 1 लाख किलो ऊन आसानी से प्राप्त हो सकती है। जिससे सस्ते उत्पाद आसानी से बनाये जा सकते हैं। साथ ही साथ कई लोगों को रोजगार भी मिल सकता है।

ऊँट आधारित पर्यावरणीय पर्यटन (इको टयूरिज्म)

ऊँट अन्य पशुओं की भाँति पूरे विश्व एवं पूरे भारत में नही पाया जाता है। इसकी बनावट, शारीरिक विशेषता, इससे जुड़ी लोक परम्परा इत्यादि लोगों के मन में कौतुहल का भाव पैदा करती है। जिसके कारण लोग विश्वभर से तथा भारत के विभिन्न स्थानों से इसे देखने आते है। जोधपुर संभाग में ऊँट की बहुलता के कारण ऊँट आधारित पर्यटन व्यवसाय फलीभूत हो सकता है।

ऊँट पर्यटन में ऊँट की सवारी, ऊँट सफारी, ऊँट नृत्य, ऊँट संबंधित उत्पादो की प्रर्दशनी एवं उनकी बिक्री मुख्य आकर्षण हो सकता हैं। ऊँट सवारी एवं ऊँट सफारी के लिए ऊँटों को उचित प्रशिक्षण देकर उसे इस लायक बना सकते है। ऊँट नृत्य के लिए भी अच्छी ट्रेनिंग की आवश्यकता होती है जिसमें समय लगता है लेकिन ऊँट नृत्य/ करतब को लोग बहुत पसंद करते है और उसके पदर्शन का लोग अच्छी फीस देकर भी देखने के लिए तैयार होते है। विभिन्न उत्पादो की सजीव एवं निर्जीव दोंनों तरह की प्रदर्शनी लगाकर भी अच्छी आमदनी प्राप्त की जा सकती है। राजस्थान में काफी संख्या में देशी एवं विदेशी सैलानी आते हैं। वर्ष 2013–14 में लगभग 15 लाख विदेशी सैलानी राजस्थान घूमने आए थे जो भारत में आए कुल विदेशी सैलानियों का 20 प्रतिशत था। राजस्थान में देश के अन्य भागों से भी काफी लोग आते हैं। आज इस इलाके में कई तरह के पर्यटन संबंधी व्यवसाय चल रहे है।

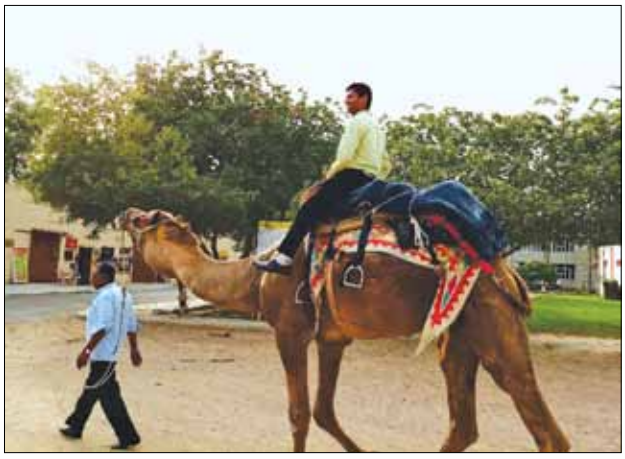

लेकिन इसको और भी आकर्षक बनाकर इस व्यवसाय से अच्छी आमदनी प्राप्त की जा सकती है। जिससे न सिर्फ उद्यमियों को फायदा होगा वरन ऊँट पालकों को भी अच्छी आमदनी होगी।

ऊँट सफारी

थार रेगिस्तान दुनिया के सबसे घनी आबादी वाला रेगिस्तान है। यहाँ का रंगीन परिधान, उत्साही पुरुष एवं स्त्री, इसके पहाड़, रेत के धोरों की प्राकृतिक सुंदरता एवं ऐतिहासिक ईमारतें इस इलाके की खास पहचान है। ऊँट सफारी राजस्थान के वास्तविक संस्कृति एवं सभ्यता को समझने का अवसर प्रदान करता है क्योंकि ऊँट के सवारी से भू–भाग के भीतर से भीतर हिस्सों में भी पहुँचा जा सकता है। राजस्थान भ्रमण के कई साधन है लेकिन ऊँट सवारी रेगिस्तान के जीवन को समझने का सबसे अच्छा तरीका है। जोधपुर संभाग का जैसलमेर क्षेत्र ऊँट सफारी के लिए काफी उपयुक्त है क्योंकि यहाँ लम्बे–लम्बे रेत के धोरे पाए जाते हैं जो सैलानियों में काफी मशहूर है।

आज ऊँट पालक एवं ऊँट दोनों अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहे हैं। वर्तमान परिवेश में ऊँट पालन आर्थिक रूप से कम फायदेमंद हो गया है। अतः अब ऊँट पालन व्यवसाय में नई संभावनाएं तलाशने की जरूरत है। आधुनिक युग में नई संभावनाएँ दूध एवं उसके उत्पाद, खाल, चमड़े, पर्यटन, हड्डी इत्यादि के रूप में पैदा हुई है। अगर इसमें सही निवेश किया जाए तथा परंपरागत तरीकों में कुछ नवीन तरीकों को भी समाहित किया जाए तो ऊँट पालक एवं ऊँट दोनों अपने अस्तित्व को कायम रख सकेंगे। जोधुपर संभाग इसमें अपनी संसाधन एवं अवसर के रूप में अग्रणी भूमिका निभा सकता है।

"हिंदी का काम देश का काम है,
समूचे राष्ट्रनिर्माण का प्रश्न है।"
- बाबूराम सक्सेना।

इंसुलिन हार्मोन : विकार एवं ऊँटनी का दूध

मु.मतीन अंसारी[1], देवेन्द्र कुमार[1], राकेश रंजन[2], शिरीष नारनवरे[1] एवं बसंती ज्योत्सना[1]

[1]वैज्ञानिक, [2]प्रधान वैज्ञानिक

[1,2]भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

हार्मोन अन्तःस्त्रावी रासायनिक संदेशवाहक होते हैं जो अन्तःस्त्रावी ग्रंथियों द्वारा स्त्रावित होते हैं एवं रक्त द्वारा लक्ष्य अंग तक जाते हैं। रासायनिक प्रकृति के आधार पर, हार्मोन को तीन प्रकार में वर्गीकृत किया जा सकता है (चित्र. 1)। इंसुलिन रासायनिक प्रकृति के आधार पर एक प्रोटीन हार्मोन होता हैं। यह हार्मोन अग्नाशय (पैंक्रियाज) में पाई जाने वाली बी कोशिकाओं या β–कोशिकाओं द्वारा स्रावित होता है। इंसुलिन की खोज के लिए सन् 1923 में फ्रेडरिक जी बैंटिंग और जॉन मैकलेड को फिजियोलॉजी/मेडिसिन के क्षेत्र में नोबेल पुरस्कार मिला था। इंसुलिन ही पहली प्रोटीन थी जिसे पूरी तरह से सन् 1955 में फ्रेडरिक सेंगर ने अनुक्रमित किया था जिसके लिए उन्हें सन् 1958 में रसायन विज्ञान के क्षेत्र में नोबेल पुरस्कार मिला था।

रासायनिक संरचना

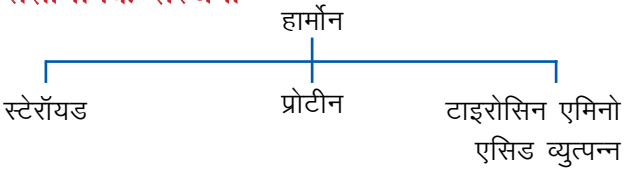

चित्र. 1. रासायनिक प्रकृति के आधार पर हार्मोन के प्रकार

इंसुलिन रासायनिक तौर पर प्रोटीन/पॉलीपेप्टाइड हार्मोन होते हैं जो 51 एमिनो एसिड की दो श्रृंखला A और B से मिलकर बना होता है। इसके A–श्रृंखला में 21 एमिनो एसिड और B–श्रृंखला में 30 एमिनो एसिड होते हैं। यह दोनों श्रृंखलाएँ दो सल्फाइड बन्धो से जुड़ी रहती हैं (चित्र. 2.)।

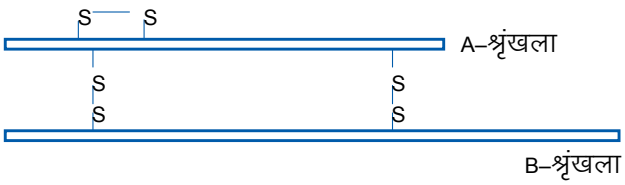

चित्र. 2. इन्सुलिन हार्मोन की चित्रात्मक आकृति

इंसुलिन का नियंत्रण

इंसुलिन का स्राव मुख्य रूप से रक्त में ग्लूकोज के स्तर द्वारा नियंत्रित होता है। रक्त में ग्लूकोज स्तर बढ़ने पर इन्सुलिन अग्नाशय की बीटा कोशिकाओं से रक्त में आने लगता है और रक्त से ग्लूकोज के स्तर को कम करने में मदद करता है।

इंसुलिन के कार्य– इंसुलिन के कार्यों (चित्र. 3.) को निम्न बिन्दुओं में दिया गया है :

- रक्त में ग्लूकोज के स्तर को कम करता है।
- ग्लूकोज के परिवहन (ट्रांसपोर्ट) और कोशिकाओं द्वारा उद्ग्रहण में मदद करता है।
- ग्लूकोज के परिधीय उपयोग में वृद्धि करता है।
- एमिनो एसिड परिवहन (ट्रांसपोर्ट) में मदद करता है।
- प्रोटीन बनाने की प्रक्रिया को तेज करता है।
- प्रोटीन अपचय (कैटाबोलिस्म) रोकता है।
- प्रोटीन के ग्लूकोज में रूपांतरण को रोकता है।
- वसा को बनाने और भंडारण में वृद्धि करता है।

इन्सुलिन के विकार

अग्नाशय की बीटा कोशिका द्वारा (नष्ट हो जाने से) इन्सुलिन को कम या ना बना पाने की वजह से मधुमेह (डायबिटीज टाइप–1) होता है। यह एक प्रकार का चयापचय (मेटाबोलिक) सिंड्रोम है जिसमें रक्त में ग्लूकोज के असामान्य रूप से उच्च स्तर की विशेषता (हाइपरग्लाईसीमिया) होती है। डायबिटीज टाइप–1 दीर्घकालिक में विभिन्न महत्वपूर्ण अंगों, रक्त वाहिकाओं और नसों को नुकसान पहुंचाकर जटिलताओं का कारण बन सकती है।

अंतर्राष्ट्रीय मधुमेह संघ के अनुसार मुख्य रूप से विकासशील देशों में, मधुमेह का प्रसार विश्व स्तर पर काफी तेजी से बढ़ता जा रहा है। जबकि विश्व स्वास्थ्य संगठन

(डब्ल्यू.एच.ओ.) ने माना है कि 2030 तक वैश्विक स्तर पर मृत्यु का सातवां प्रमुख कारण मधुमेह हो सकता है।

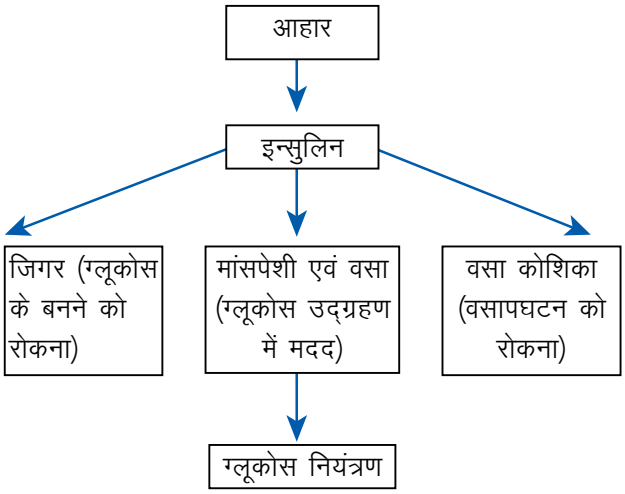

चित्र. 3. इन्सुलिन के ग्लूकोज नियंत्रण का प्रवाह रेखा चित्र

मधुमेह में ऊँटनी का दूध

ऊँटनी का दूध लंबे समय से अपने स्वास्थ्य लाभ के लिए जाना जाता रहा है जिसमें मुख्यतः मधुमेह रोधी गुण के लिए सबसे जादा जाना जाता है। अन्य पशुओं जैसे गाय, भैंस आदि की तुलना में ऊँटनी के दूध में वसा (फैट) कम होता है जबकि विटामिन्स (एंटीऑक्सीडेंट), विशेष एंटीबाडीज, खनिज पदार्थ अन्य पशुओ की तुलना में ज्यादा होते हैं। खनिज पदार्थ ज्यादा होने की वजह से ऊँटनी का दूध पीने में नमकीन (खारा) लगता है। ऊँटनी के दूध में छोटे आकार की इम्युनोग्लोबुलिन एवं इन्सुलिन भी पाई जाती है। इन सब खूबियों की वजह से ऊँटनी का दूध मधुमेह के रोकथाम में मदद कर सकता है।

निष्कर्ष

इन्सुलिन एक प्रोटीन हार्मोन है जो अग्नाशय की बीटा कोशिकाओं से स्त्रावित होता है। यह रक्त में ग्लूकोस के स्तर को बनाए रखने में मदद करता है। इसके बीटा कोशिकाओं से स्त्रावित ना होने पर मधुमेह एवं उससे संबंधित दूसरी बीमारियाँ हो सकती है। ऊँटनी के दूध में प्राकृतिक इन्सुलिन, इम्युनोग्लोबुलिन विटामिन्स एवं जरूरी खनिज पाए जाते हैं इसकी वजह से इसे मधुमेह के प्रबंधन के काम में लिया जा सकता है।

ऊँटनी के दूध के जैव-सक्रिय घटकों का औषधीय मूल्य

गोरख मल[1] एवं बी.सिंह[1]

[1]प्रधान वैज्ञानिक

[1]भाकृअनुप–भारतीय पशु–चिकित्सा संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, पालमपुर

उष्ट्र प्रजाति मरुस्थलीय व शुष्क क्षेत्रों में पाया जाने वाला बहुपयोगी पशुधन है। ऊँटनी का दूध केवल पोषण की दृष्टि से ही महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि उपलब्ध आँकड़ों के अनुसार भारत व अन्य देशों में इसका उपयोग कई बीमारियों में बहुत लाभप्रद पाया गया है।

पिछले दो दशकों में ऊँटनी के दूध के औषधीय मूल्यों के कारण दूध उपयोग में वृद्धि और दिलचस्पी बढ़ती देखी गई है। इसलिए ऊँटनी दूध के जैव–सक्रिय घटकों से संभावित स्वास्थ्य लाभों का अध्ययन करने के लिए दुनिया भर के वैज्ञानिकों का ध्यान आकर्षित हुआ है। ऊँटनी का दूध पीलिया, यकृत, पेट अलसर और बवासीर इत्यादि बीमारियों में उपयोगी बताया जाता है। दूध में इन्सुलिन/इन्सुलिन की भाँति प्रोटीन पाई जाती है जो कि मधुमेह रोगियों के लिए बहुत ही लाभदायक है। ऊँटनी दूध को विभिन्न प्रकार के क्षय रोगियों में भी उपयोगी पाया गया है। जहां एक तरफ ऊँटनी दूध की उपयोगिता सर्वविदित है, वहीं राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र ने ऊँटनी दूध को एक आय–स्रोत के रूप में लाने के लिए कदम उठाया है।

ऊँटनी दूध की वैश्विक मांग में वृद्धि के कारण, दुनिया के विभिन्न क्षेत्रों में विशेष रूप से एशिया और अफ्रीका में उष्ट्र पालन के प्रति दिलचस्पी बढ़ रही है। राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर ने ऊँटनी के दूध से कई प्रकार के उत्पाद तैयार किए हैं, जिनमें विभिन्न स्वादयुक्त कुल्फी, सुगन्धित दूध, किण्वित दूध, पनीर, बर्फी, गुलाब जामुन, चॉकलेट, चाय एवं कॉफी शामिल है। ऊँटनी दूध से निर्मित अमूल चॉकलेट भी स्थानीय बाजारों में उपलब्ध हैं।

वैज्ञानिकों द्वारा प्रमाणित कर दिया गया है, कि ऊँटनी दूध के घटक पौष्टिक दृष्टिकोण से उत्कृष्ट हैं, क्योंकि इसमें एंटी–बैक्टीरिया और एंटी–वायरल पदार्थों का उच्च अनुपात उपस्थित होता है। मधुमेह से लेकर कैंसर तक के विभिन्न विकारों वाले मरीजों में ऊँटनी दूध से प्राप्त लैक्टोफेरिन, इम्यूनोग्लोबुलिन, लाइसोजाईम, विटामिन बी, विटामिन सी जैसे तत्वों का अध्ययन उनके औषधीय गुणों के लिए किया गया है। ऊँटनी के दूध में विटामिन 'ए', 'बी' एवं विटामिन 'ई' की मात्रा क्रमशः 10.1–30.0 माइक्रोग्राम प्रतिशत, 13.2–26.0 माइक्रोग्राम प्रतिशत व 19.9–45.5 माइक्रोग्राम प्रतिशत तक पाई जाती है। विटामिन 'सी' की मात्रा 4.84–5.26 मिलीग्राम प्रतिशत तक होती है। ऊँटनी के दूध में नियासिन एवं विटामिन–ई की मात्रा गाय के दूध से काफी अधिक पाई जाती है। विटामिन–ई एक एंटी–आक्सीडेंट है, जो हमारे शरीर की मूलभूत जरूरतों को पूरा करता है। त्वचा से जुड़ी अनेक बीमारियों के ईलाज में भी विटामिन–ई काफी मददगार होता है। विटामिन–ई की मदद से त्वचा पर पड़ने वाली झुरियों से काफी हद तक छुटकारा पाया जा सकता है और इससे त्वचा की प्रतिरोधात्मक क्षमता मजबूत होती है। त्वचा कैंसर में भी विटामिन–ई फायदेमंद बताया गया है। ऊँटनी दूध अल्फा–हाइड्रोक्सी अम्ल का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत है, जिसे त्वचा विकारों एवं त्वचा गुणवता के समग्र सुधार के लिए उपयोग में लाया जाता है। इसी संदर्भ में राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र ने ऊँटनी दूध से चेहरे पर लगाने के लिए क्रीम भी बनाई है।

ऊँटनी दूध में लोहा, जस्ता एवं तॉबा की मात्रा 0.88–1.12 मिलीग्राम प्रतिशत, 1.19–2.02 मिलीग्राम प्रतिशत व 0.40–0.48 मिलीग्राम प्रतिशत के लगभग पाई जाती है, जो कि गाय के दूध की तुलना में काफी अधिक है। ऊँटनी का दूध गाय, भैंस, भेड़, आदि के दूध की तुलना में अधिक पौष्टिक है, क्योंकि इसमें वसा या लैक्टोज की मात्रा कम होती है। वसा की मात्रा 1.95–2.99 प्रतिशत होती है एवं ऊँटनी के दूध में लघु श्रृँखला वसीय अम्ल (सी 4–सी 12) तुलनात्मक रूप से कम एवं असंतृप्त अम्ल (सी 14–सी 18) अधिक मात्रा में पाए जाते हैं। ऊँटनी दूध नियमित

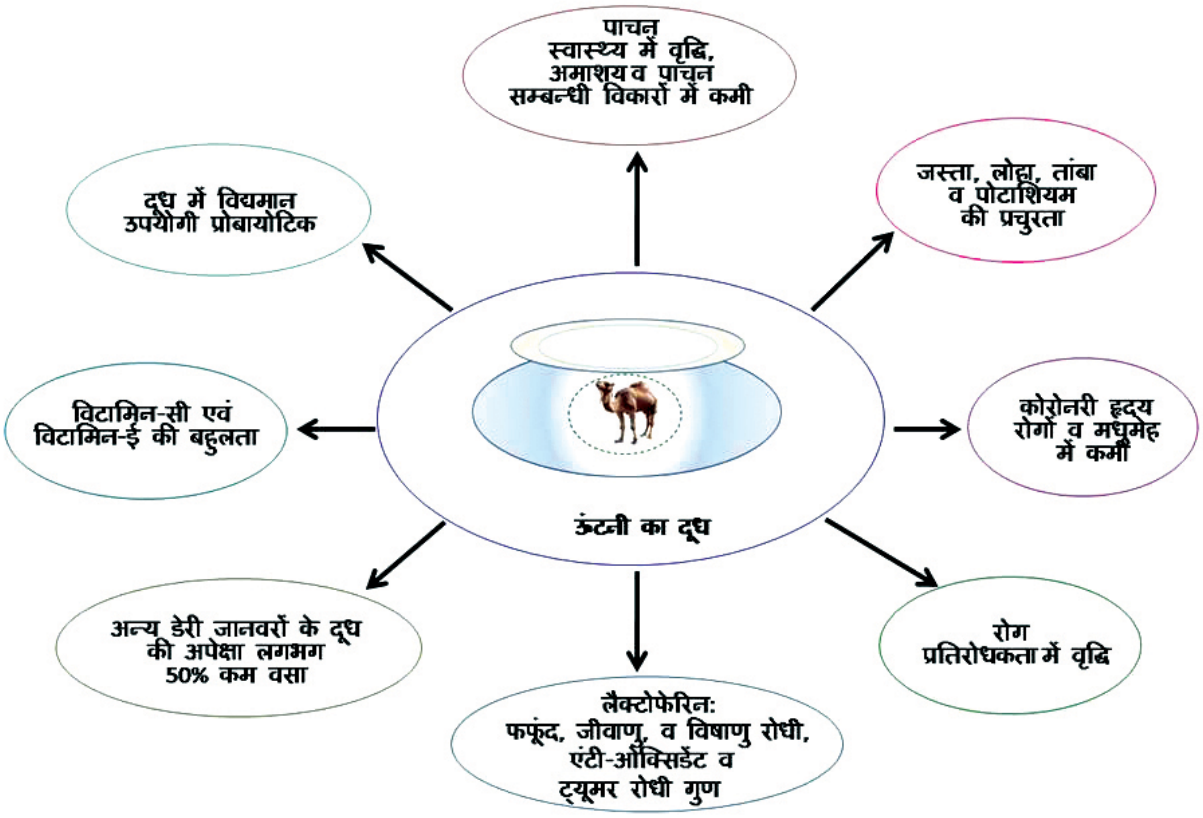

चित्र 1. ऊँटनी दूध के जैव–सक्रिय घटक एवं औषधीय महत्व

पीने से प्रतिरक्षा प्रणाली मजबूत होती है, क्योंकि इसमें कई प्रकार के रक्षात्मक प्रोटीन लाइसोजाईम, लैक्टोफेरिन, लैक्टोपरऑक्सीडेज, इम्यूनोग्लोबुलिन जी, इम्यूनोग्लोबुलिन ए एवं पैप्टीडोग्लाइकान पहचान प्रोटीन पाए जाते हैं। लाइसोजाईम, लैक्टोफेरिन, लैक्टोपरऑक्सीडेज एवं पैप्टीडोग्लाइकान पहचान प्रोटीन की मात्रा क्रमशः 0.65 मिलीग्राम प्रतिशत, 2.5 मिलीग्राम प्रति मिलीलीटर, 2.23 यूनिट प्रति मिलिलीटर एवं 10.7 मिलीग्राम प्रतिशत पाई गई है। यह देखा गया है कि जिन लोगों को गाय दूध पीने से एलर्जी होती है, उनको ऊँटनी दूध से एलर्जी नहीं होती है क्योंकि ऊँटनी दूध में एलर्जी कारक प्रोटीन की मात्रा नगण्य होती है। अनुसन्धान से पता चला है कि ऊँटनी दूध में मस्तु प्रोटीन्स की मात्रा गाय दूध की तुलना में काफी अधिक होती है। दूध में मस्तु प्रोटीन्स की प्रचुरता कैंसर, मधुमेह एवं हृदय रोग अवरोधी मानी जाती है।

ऊँटनी दूध में मुख्य रूप से दो सक्रिय तत्व लैक्टोफेरिन और इम्यूनोग्लोबुलिन होते हैं। ऊँटनी दूध से प्राप्त लैक्टोफेरिन पर हुए अध्ययनों से पता चलता है कि इसमें एंटी–बैक्टीरिया, एंटी–फंगल, एंटी–वायरल, एंटी–इंफ्लैमेटरी, एंटी–ऑक्सीडेंट एवं एंटी–ट्यूमर इत्यादि गुण हैं (चित्र 1)। ऊँटनी दूध में इंसुलिन जैसी खास प्रकार की प्रोटीन पाई गयी है, जिस पर पेट में पाचन एंजाइमों का असर कम होता है एवं मधुमेह रोगियों में उपयोगी पाई गयी है।

ऊँटनी दूध में इम्यूनोग्लोबुलिन भी चिकित्सीय रूप से बहुत ही महत्वपूर्ण हैं क्योंकि इम्यूनोग्लोबुलिन में केवल दो भारी श्रृंखलाएं उपस्थित होती हैं, एवं हल्की श्रृंखलाएं अनुपस्थित होती हैं, जिनका विभिन्न प्रकार के मरीजों के लिए प्रतिरक्षा चिकित्सा में उपयोग किया जा सकता है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि ऊँटनी दूध में अति महत्वपूर्ण जैव–सक्रिय घटकों की उपस्थिति होने के कारण इसका उपयोग करके स्वास्थ्य लाभ प्राप्त किया जा सकता है। तथापि इन तथ्यों की पूर्ण जानकारी प्राप्त करने के लिए और अनुसन्धान अध्ययनों की अत्यन्त आवश्यकता है।

जूनोटिक फफूंद रोग

एफ.सी.टुटेजा[1], एस.डी.नारनवरे[2], नेमीचंद बारासा[3] एवं आर.के.सावल[4]

[1]वरिष्ठ वैज्ञानिक, [2]वैज्ञानिक, [3]सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी, [4]निदेशक

[1,2,3,4]भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

जूनोसिस जानवरों से उत्पन्न बीमारियां होती हैं। जानवरों के संक्रमण से मनुष्यों को संक्रमण के संचरण को जूनोटिक संक्रमण कहते हैं, ये जूनोटिक संक्रमण वायरस, बैक्टीरिया, परजीवी और फफूंद के कारण होते हैं। वैश्विक स्तर पर यह जाना गया है कि सभी उभरते हुए रोगजनकों में से 75 प्रतिशत जूनोटिक हैं, जो मूल रूप से वन्यजीवन से उत्पन्न होते हैं। इन जूनोटिक संक्रमण के कारण काफी आर्थिक और सार्वजनिक स्वास्थ्य का नुकसान होता है।

भारत में जूनोटिक फफूंद के कारण होने वाली स्वास्थ्य समस्याओं के बारे में जागरूकता बढ़ाने की आवश्यकता है। जूनोटिक फफूंद जानवरों के बीच स्वाभाविक रूप से संचारित किया जा सकता है। कुछ मामलों में यह जनता के लिए गंभीर स्वास्थ्य समस्याएं बन जाते हैं। कुछ जूनोटिक फंगल रोगों में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर संभावित ध्यान दिया गया है। भारत वर्ष में जूनोटिक क्षमता वाले फफूंद रोगों पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है, शायद इस तथ्य के कारण फफूंद अभी तक जानवरों और मनुष्यों में विकृति और मृत्यु दर के प्रमुख कारणों के रूप में पहचाना नहीं जा सका है। कुछ मुख्य जूनोटिक फफूंद रोग इस प्रकार है –

1. डरमेटोफाईटोसिस – यह एक त्वचा फफूंद बीमारी है जो दुनिया के 145 से अधिक देशो में छुट–पुट और महामारी के रूप में सार्वजनिक स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव

ट्राइकोफाईटोन विओलसुम संकर्मित ऊँट से ऊँट मालिक में जूनोटिक फफूंद रोग

चित्र 1. संक्रमित ऊँट के छाती और काख क्षेत्र पर त्वचाक्षति घाव

चित्र 2. ऊँट मालिक की भुजा पर त्वचाक्षति घाव

चित्र 3. ऊँट मालिक की जांघ पर त्वचाक्षति घाव

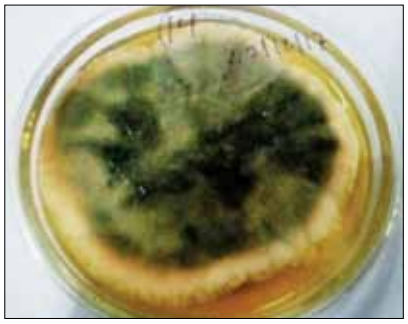

चित्र 4. ट्राइकोफाईटोन विओलसुम फफूंद कॉलोनी

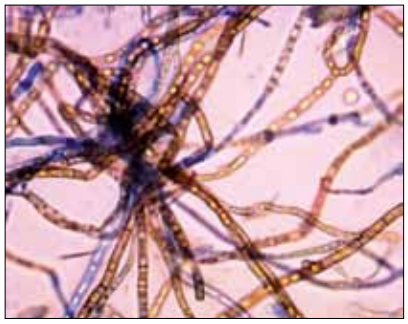

चित्र 4. सूक्ष्मदर्शी जाँच में हाइफी में वसा ग्लोब्यूल और ग्रेन्युल

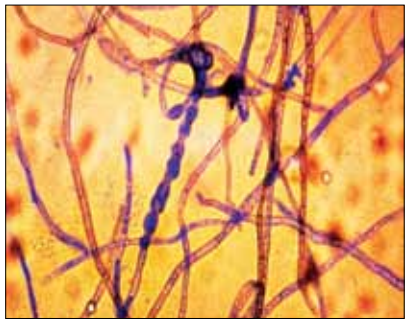

चित्र 3. सूक्ष्मदर्शी जाँच में फफूंद क्लाम्यदोस्पोर्स

डालती है। यह बीमारी एक रोगजनक फफूंद समूह जिसे ''डरमेटोफाईटस" कहते हैं, के कारण होता है। इस फफूंद समूह में पहचान की गई 40 प्रजातियाँ शामिल है, इसमें तीन जातिया माईक्रोस्पोरम, ट्राइकोफाईटोन और एपिडर्मोफाईटोन शामिल हैं। पारिस्थितिक रूप से डरमेटोफाईटस को जुफिलिक, एंथ्रोपोफिलिक, भूगर्भीय (क्रमशः जानवरों, मनुष्यों और मिट्टी) प्रकृति के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। जुफिलिक डर्माटोफाईट्स में मनुष्य का ग्रसित जीवों के संपर्क से संक्रमण हो सकता हैं। जूनोटिक डरमेटोफाईटस की चार प्रजातियां अधिकतर संचारित होती हैं। माइक्रोस्पोरुम कैनिस (विशेष रूप से बिल्लियों और कुतों से) ट्राइकोफाईटोन वेर्रुकोसम (आमतौर पर मवेशियों से) आथ्रीडर्मा वैनर्ब्यूजगेमी (आमतौर पर बिल्लियों और कुत्तों से) और आथ्रीडर्मा बेनाहिया (आमतौर पर गिनी सूअर से)। मानव संक्रमण अक्सर सीधे एक संक्रमित पशु के संपर्क से होता है, लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से दूषित वातावरण के कारण भी अधिग्रहण किया जा सकता है, चूँकि संक्रमित जानवरों के फफूंद दूषित बाल व त्वचा कोशिकाओं के कारण वातावरण दूषित होता है। जुफिलिक डर्माटोफाईट्स के कारण त्वचा फफूंद रोगों का प्रसार दुनिया के विभिन्न हिस्सों में विशेष रूप से गर्म और आर्द्र जलवायु, और खराब स्वच्छता स्थितियों वाले उष्णकटिबंधीय देशों में महत्वपूर्ण पाया जाता है। भारत के ग्रामीण क्षेत्रो में किसानों द्वारा पशुधन को घरेलू स्तर पर रखने के कारण मनुष्यों को जूनोटिक संक्रमण के संचरण का खतरा बढ़ जाता है। परन्तु पशु चिकित्सा और चिकित्सा शोधकर्ताओं द्वारा फफूंद रोगों के रोकथाम और नियंत्रण पर एकीकृत मंच के विकास में अपर्याप्त रुचि रही है।

2. बेसिडियोबोलोमाईकोसिस– यह संक्रमण बेसिडियोबोलोस रेनरम नामक फफूंद से होने वाला एक दुर्लभ लेकिन उभरता हुआ रोग है। आमतौर पर यह एक त्वचा का संक्रमण होता है लेकिन जठरांत्र संक्रमण का भी वर्णन किया गया है। बेसिडियोबोलोस रेनरम एक पर्यावरणीय सैप्रोफाइट है जो दुनिया भर में पाया जाता है और पौधों की सामग्री, खाद्य पदार्थों, फलों, पर्णपाती पेड़ों की पत्तियों और मिट्टी में मिलता है। इसके अलावा, यह कभी–कभी उभयचर (मेंढक, टॉड), सरीसृप (बगीचे की छिपकली, गीकोस), मछली, और स्तनधारियों (घोड़े, कुत्तों, कीट खाने वाला चमगादड़ और मनुष्यों) के जठरांत्र पथ में भी मौजूद होते हैं। यह संक्रमण अफ्रीका, एशिया, दक्षिण अमेरिका, संयुक्त राज्य अमेरिका और यूरोप के उष्णकटिबंधीय देशों में होता है। उष्णकटिबंधीय वातावरण में पौधों के मलबे में मौजूद फफूंद के जख्म द्वारा प्रत्यारोपण या इनहेलेशन के परिणामस्वरूप स्पोरैडिक संक्रमण होता है। फफूंद त्वचा में जख्म के माध्यम से मनुष्य के ऊतको में प्रवेश करती है और धीरे–धीरे त्वचा के नीचे एक सख्त गांठ बन जाती है। दूषित मिट्टी या पशु मल के साथ संदूषित भोजन को खाने से भी संक्रमण हो सकता है। यदि इलाज नहीं किया जाता है, तो बेसिडोबोलोमाइकोसिस कभी–कभी मस्तिष्क जैसे महत्वपूर्ण अंगों को प्रभावित करने वाले गहरे ऊतकों में फैल सकता है जिसके परिणामस्वरूप रोगी की मृत्यु भी हो जाती है।

3. हिस्टोप्लाज्मोसिस – यह संक्रमण डाईमार्फिक फफूंद हिस्टोप्लाज्मा कैप्सूलैटम से होता है। हिस्टोप्लाज्मा कैप्सूलैटम पर्यावरण में विशेष रूप से उस मिट्टी में पाया जाता है जिसमें बड़ी मात्रा में पक्षी या चमगादड़ की मल होती है। फफूंद आंतों की सामग्री और घरेलू जानवरों (कुत्तों, बिल्लियों, मवेशी, भेड़ और घोड़ों) और वन्यजीवन (चमगादड़ और जंगली कृंतक) के विभिन्न अंगों में भी पाया गया है। इसके अलावा, फफूंद के कारण प्राकृतिक संक्रमण बाबून (साइनोसेफलस बाबुइन) में हुआ है। दरअसल, सूक्ष्मदर्शी फफूंद बीजाणु, अन्तःश्वसन से फेफड़ो की वायुकोशों में जमावट के माध्यम से संचरण होता है। चोट लगने के बाद ट्रांसक्यूटेशनल संचरण के साथ–साथ कीटों के काटने से संक्रमण की संभावित भूमिका भी है। जोखिम आबादी में आने वालो में किसान, मुर्गीपालक, और निर्माण श्रमिक जो विशेष रूप से पुरानी इमारतों के आसपास काम करते हैं। कुछ लोग बीमारी को 'गुफा रोग' के रूप में भी संदर्भित करते हैं। संक्रमण कुछ लोगों में फेफड़ों की बीमारी का कारण बनता है और कुछ मामलों में संक्रमण, पूरे शरीर में भी फैल जाता है।

4. स्पोरोथ्रोसिस – यह संक्रमण डाईमार्फिक फफूंद स्पोरोथ्रिक्स स्चेनेककी से होता है। स्पोरोथ्रोसिस 'गुलाब माली रोग' भी कहा जाता है। यह कवक रोग आमतौर पर त्वचा को प्रभावित करता है, हालांकि अन्य दुर्लभ रूप फेफड़ों, जोड़ों, हड्डियों और यहां तक कि मस्तिष्क को भी

प्रभावित कर सकते हैं। जापान, भारत, मेक्सिको, ब्राजील, उरुग्वे और पेरू के मुख्य क्षेत्रों के साथ–साथ दुनिया भर में विशेष रूप से उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में यह रोग अधिक होता है। यह फफूंद स्वाभाविक रूप से वनस्पति, पशु उत्सर्जन और मिट्टी में एक सैप्रोफाइट के रूप में रहता है। आमतौर पर चोट लगने से संक्रमण होता है। हालांकि जूनोटिक संचरण मनुष्यों के लिए रोग का मुख्य तरीका नहीं है। वर्तमान में पशु चिकित्सक, तकनीशियन, बिल्ली पालक स्पोरोथ्रोसिस के लिए एक नई जोखिम श्रेणी के रूप में है। इस रोग का संचरण कृंतक, बिल्लियों, कुत्तों, गिलहरी, तोते, घोड़ों, और पक्षियों के काटने या खरोंच से भी होता है। फफूंद के संपर्क में पारंपरिक रूप से जुड़े कुछ व्यावसायिक जैसे फूलों की बागवानी, मछली पकड़ना, शिकार, खेती, खनन इत्यादि संक्रमण संचरण में विशेष भूमिका निभाते हैं। इस फफूंद के जूनोटिक संचरण की सबसे बड़ी महामारी 1998 से दिसंबर 2009 तक ब्राजील के रियो–डी–जेनेरो में हुई और इसमें 2000 से अधिक मानव एवं 3000 से ज्यादा बिल्लियों के मामले शामिल थे।

5. पैराकोक्सीडियोइडोमाइकोसिस – यह एक तीव्र से दीर्घ प्रणालीगत संक्रमण है जो डाईमार्फिक फफूंद, पैराकोक्सीडियोइड्स ब्रैसिलिनेन्सिस के कारण होता है। भौगोलिक दृष्टि से, यह रोग लैटिन अमेरिका में अधिक होता है व ब्राजील के 80 प्रतिशत मामलों के लिए जिम्मेदार है। उन देशों में जहां यह बीमारी अधिक है, सभी जगह एक जैसी स्थिति नहीं है, लेकिन आर्द्र जंगलों (उपोष्णकटिबंधीय या उष्णकटिबंधीय) के आसपास अधिक केंद्रित हैं। पैराकाक्सीडियोइडोमाइकोसिस पर्यावरण में मौजूद संक्रमित बीजाणु के अन्तः श्वास से या त्वचा और श्लेष्मा झिल्ली की जख्मों के माध्यम से, मनुष्यों और जानवरों दोनों में संचरण करता है। यह रोग गायों, घोड़ों, आर्मडिलोस, भेड़, बंदर, गिनी–सूअर, रेकून, पोर्क्यूपिन और मुर्गियों सहित घरेलू और जंगली जानवरों की कई प्रजातियों में होता है। कुत्तों और बिल्लियों में प्राकृतिक संक्रमण होता है। यद्यपि पैराकोक्सिडियोइडोमाइकोसिस को जूनोसिस होने के लिए दृढ़ता से प्रदर्शित नहीं किया गया है, लेकिन निम्नलिखित तथ्यों के आधार पर इसके लिए एक जूनोटिक भूमिका का सुझाव दिया गया है : (i) यह वन्यजीवन (आर्मडिलोस और बंदरों) और घरेलू जानवरों में प्रदर्शित किया गया है (ii) कारक फफूंद, का निवास ज्ञात नहीं है। (iii) यह रोग अधिकतर ग्रामीण इलाको में होता है, जो अधिकांश जूनोटिक संक्रमणों के अनुरूप है (iv), आनुवंशिक रूप से संक्रमित आर्मडिलोस और इंसान में पैराकोक्सिडियोइडोमाइकोसिस ब्रासिलियन्सिस की समान प्रजातियाँ पाई गई।

6. पेनिसिलियोसिस – यह एक प्रणालीगत संक्रमण है जो डाईमार्फिक फफूंद, टैलारोमाइसेस (पेनिसिलियम) मर्नेफ्फी के कारण दक्षिण–पूर्व एशिया में एक महत्वपूर्ण रोगजनक है। टैलारोमाइसेस मर्नेफ्फी का संक्रमण उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों, विशेष रूप से थाईलैंड, वियतनाम, उत्तर पूर्वी भारत, दक्षिणी चीन, हांगकांग, ताइवान, मलेशिया, म्यांमार, कंबोडिया और लाओस में स्थानिक है। बांस के पेड के पास रहने वाले चूहों और उनके बिल की मिट्टी इस फफूंद के महत्वपूर्ण प्राकृतिक स्रोत है। हाल ही में कुत्तों को इस फफूंद के लिए एक संभावित स्रोत के रूप में सुझाव दिया गया है।

पिछले कुछ सालों में, जानवरों को पालतू जानवरों के रूप में रखने में रुचि काफी बढ़ गई है, ऐसे पालतू जानवर अपने मालिकों और अधिकांश घरों के सदस्यों के साथ सहनिवास करते है इस तरह के घनिष्ठ संपर्कों के कारण, मनुष्यों के लिए जूनोटिक रोगजनकों के संचरण की संभावना बढ जाती है, खासकर उन पालतू जानवरों से जो फफूंद के वाहक हैं। इन जानवरों से जूनोटिक फफूंद रोगजनकों का संचरण प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष हो सकता है। हालांकि जूनोटिक फफूंद बीमारियों का वैश्विक आंकड़ा लगातार बढ़ रहा है, लेकिन इन बीमारियों पर दिया गया वैज्ञानिक और सार्वजनिक स्वास्थ्य ध्यान बहुत कम है। नतीजतन हमारा सुझाव हैं कि इन बीमारियों के लिए प्रासंगिक पशु और मानव स्वास्थ्य प्राधिकरणों द्वारा 'वन हेल्थ दृष्टिकोण' अपनाया जाना चाहिए।

ऊँटों के नवजात बच्चों में मृत्युदर के कारण व प्रबंधन

शिरीष नारनवरे[1] एवं एफ.सी. टुटेजा[2]

[1]वैज्ञानिक, [2]वरिष्ठ वैज्ञानिक

[1,2]भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

किसी भी पशु फार्म में नवजात बच्चों की देखभाल एक महत्वपूर्ण गतिविधि है। यदि नवजात बच्चों में मृत्युदर अधिक है तो उसकी वजह से पूरे फार्म की उत्पादकता दर भी घटने लगती है, साथ ही यह पशु उपचार व नए जानवरों के खरीद में होने वाली आर्थिक हानि के लिए भी जिम्मेदार है। बछड़ों में मृत्युदर पहले 16 हफ्तों में 8–12 प्रतिशत तक पाई जाती है। चूँकि नवजात बच्चा अपने शरीर के ताप को नियंत्रित करने में असमर्थ होता है, इसलिए उष्ण क्षेत्रों में मृत्युदर अधिक पायी गयी है। उष्म तापमान पर न केवल बच्चे का विकास प्रभावित होता है, रोग प्रतिरोधी क्षमता का भी पर्याप्त विकास नहीं हो पाता है। इसके अलावा रोग होने की ज्यादा संभावना, कम चारा खाना, शारीरिक विकास दर में कमी इत्यादि लक्षण दिखाई देते हैं। ऊँट एक मौसमी प्रजनक प्राणी है व इसमें प्रजनन व ब्यांत शीतकाल में होता है। इसलिए नवजात बच्चों में निमोनिया से होने वाली मृत्युदर सबसे अधिक पाई गई है। ऊँटों में नवजात लगभग 30 दिन तक के बच्चों को माना जाता है। ज्यादातर मामलों में 1–4 दिनों तक के बच्चों में अधिक मृत्युदर पायी जाती है। मृत्युदर के लिए ज्यादातर निमोनिया के अलावा, फायब्रीनस प्लयूराइटिस, पेरिकार्डाय्टिस, आंत्रशोध, मस्तिष्क शोध, पीलिया व जन्मजात विकृतिया शव परीक्षण पश्चात देखी गई।

ऊँटों के नवजात बच्चों में मृत्युदर के लिए निम्नलिखित महत्वपूर्ण कारक पाए गए हैं :

1. संक्रामक बीमारियाँ

i. निमोनिया

निमोनिया में श्वास लेने में तकलीफ, तेज बुखार, कमजोरी, दूध न पीना जैसे बाह्य लक्षण दिखाई देते हैं। ऐसे जानवरों में शव परीक्षण में फेफड़ो में मवाद या अत्याधिक रक्त की मात्रा दिखाई देती है। निमोनिया के लिए क्लेब्सिएल्ला, ब्रुसेल्ला, स्ट्रेप्टोकोकाई, पास्तुरेल्ला ये जीवाणु व आयबिआर व बोवाइन वायरल डायरिया वायरस विषाणु प्रमुख कारण है।

चित्र. नवजात ऊँट के बच्चे में फेफड़े में निमोनिया के लक्षण

ii. आंत्रशोध या डायरिया

इसमें नवजात बच्चों में दस्त, जो कि गाढ़ी सफेद पीली या हरे रंग की होती है, के लक्षण दिखाई देते हैं। दस्त के कारण शरीर में पानी की कमी से ऊँट कमजोर हो जाता है। यह दस्त कुछ मामलों में ज्यादा दूध पीने से भी हो सकती है जिसमे ज्यादा खतरा नहीं होता। हालाँकि संक्रमण से होने वाली दस्त नवजात बच्चो में ज्यादा खतरनाक होती है जिससे ऊँट की मृत्यु भी हो सकती है। जीवाणु द्वारा संक्रमण के लिए ई. कोलाय व साल्मोनेला सबसे ज्यादा कारणीभूत है। विषाणु द्वारा होने वाली दस्त में रोटा वायरस, कोरोना वायरस तथा बोवाइन वायरल डायरिया वायरस कारणीभूत होता है। दस्त के नियंत्रण के लिए एंटीबायोटिक्स व ग्लूकोस सलाइन नसों में तुरंत देनी चाहिए। बीमार जानवर को गंदे स्थान पर न रखें व उसकी माँ के दूध की भी जाँच कर लें कि कहीं उसके थनों में संक्रमण तो नहीं है।

चित्र. नवजात ऊँट के बच्चे में दस्त के लक्षण

iii. सेप्टिसीमिया

यह बीमारी नवजात बच्चो में ई. कोलाय, पास्तुरेल्ला, स्ट्रेप्टोकोकाय, साल्मोनेला, सुडोमोनस, ब्रुसेला या क्लेब्सिएल्ला जीवाणु के कारण हो सकती है। इसमें संक्रमित बच्चो में तीव्र बुखार के साथ कमजोरी, श्वास में तकलीफ व अचानक मृत्यु जैसे लक्षण दिखाई देते हैं। ऐसे ऊँटों के शव परीक्षण में आँखों में अधिक रक्त संचार, सभी अंगों जैसे फेफड़े, प्लीहा, कलेजा, दिमाग व गुर्दे इत्यादि में छोटे–छोटे रक्तस्राव के निशान देखने को मिलते हैं। सेप्टिसीमिया के निदान में संक्रमित ऊँटों के सभी अंगो तथा रक्त से जीवाणुओ का पृथ्थीकरण किया जा सकता है।

iv. नाभि का संक्रमण

नवजात ऊँट के बच्चो में नाभि व नाभि की रक्त वाहिनियो का संक्रमण एक प्रमुख बीमारी है। बच्चे के जन्म के पश्चात् उसकी नाल काटने पर यदि कोई दवाई नहीं लगायी जाती व उसकी समुचित देखभाल नहीं होती तो ऐसे बच्चों में नाभि में संक्रमण का खतरा रहता है। जीवाणु संक्रमण के कारण नाभि के स्थान पर पस भर जाता है व सूजन आ जाती है। यह संक्रमण मुख्यतया ई. कोलाय, स्ट्रेप्टोकोकाई अथवा स्टफायलोकोकाई द्वारा होता है। इसके साथ ही संक्रमित बच्चों में बुखार, दस्त, जोड़ों में संक्रमण व दर्द व दिमागी बुखार जैसे सेप्टिसीमिया के लक्षण दिखाई देते हैं। इसके इलाज में एंटीबायोटिक दवाइयां एक से दो हफ्तों तक दी जाती है व साथ ही सूजन रोधी दवाईयाँ दी जाती हैं।

अ. गठिया अथवा जोड़ो में संक्रमण

जोड़ो में संक्रमण रक्त द्वारा या जोड़ो में किसी घाव की वजह से हो सकता है। माय्कोप्लास्मा बोविस व ब्रुसेला नामक जीवाणु का संक्रमण इस बीमारी में मुख्य रूप से देखा गया है। इस बीमारी में जोड़ो में दर्द, सुजन व बुखार रहता है। इसके इलाज में एंटीबायोटिक दवाइया 2 से 3 हफ्तों तक दी जाती है व सूजन रोधी दवाइया दी जाती है। इसके अलावा जोड़ो पर लगाने के लिए सूजन रोधी मलम लगाया जा सकता है। जोड़ो के भीतर भी सुजन रोधी इंजेक्शन दिया जाता है।

2. जन्मजात विकृतियाँ

ज्यादातर जन्मजात विकृतियां प्राणघातक होती है। इसमें आंतो का अवरुद्ध होना, संधिवक्रता, मस्तिष्क का अविकसित होना, भंग तालू, मस्तिष्क में पानी भरना, पेट के अंगो का नाभि से बाहर आना, तथा हृदय के दो भागों के बीच की आतंरिक परत में छेद होना प्रमुख है।

i. नाभि का हर्निया

नाभि के हर्निया में पेट की त्वचा की परते एक दूसरे में जुड़ नहीं पाती, व उसमे छेद रह जाता है। इसमें आंत या अन्य अंग बाहर निकलकर उभरा हुआ प्रतीत होता है। यद्यपि यह दर्द रहित होता है, किन्तु इसमें संक्रमण का खतरा होता है। इसके इलाज के लिए सर्जरी ही एकमात्र विकल्प है। यदि हर्निया वाली जगह पर पस भर जाए तो, सर्जरी से पहले उसको निकालकर साफ करना जरुरी है।

ii. मध्यपट अथवा डायफ्रमेटिक हर्निया

इसमें श्वसन तंत्र व पेट के बीच की दीवार यानि कि मध्यपट की परत में कोई छेद रह जाता है अथवा यह परत ही अनुपस्थित होती है, जिससे कि पेट के अंग श्वसन तंत्र

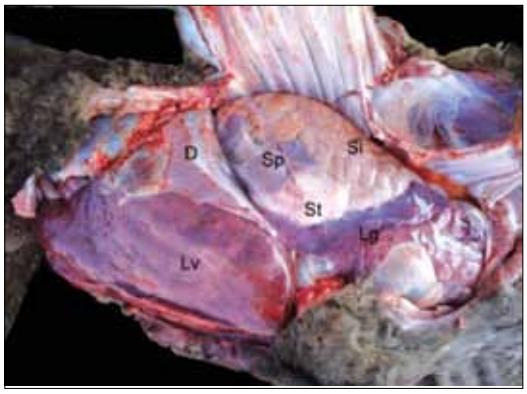

चित्र. पेट व छाती के मध्यपट में छेद के कारण आंतों का श्वसन तंत्र में घुस जाना

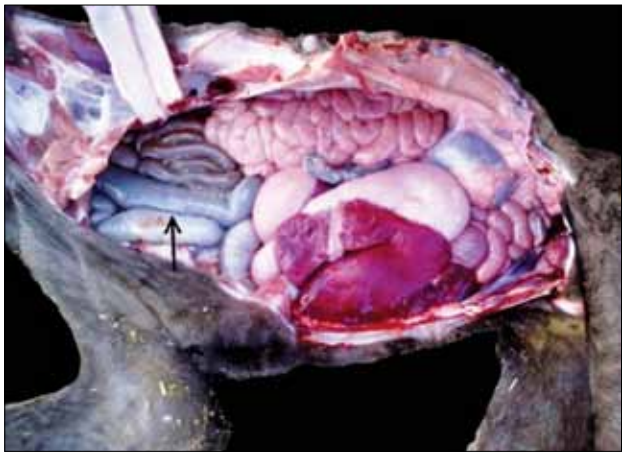

चित्र. पेट व छाती के बीच मध्यपट की अनुपस्थिति

में चले जाते हैं। ऐसे बच्चे या तो मृत पैदा होते हैं या जन्म के कुछ समय पश्चात ही मर जाते हैं।

iii. अन्य विकृतियाँ

अन्य विकृतियों में किसी महत्वपूर्ण अंग का सही से विकास न होना अथवा उसकी पूरी अनुपस्थिति हो सकती है, जिससे कि बच्चा मृत पैदा होता है।

3. वातावरणीय तनाव

अत्यधिक गर्मी अथवा अत्यधिक ठन्डे वातावरण में नवजात बच्चों को तनाव का सामना करना पड़ता है क्योंकि वे शरीर के ताप को वातावरण के हिसाब से नियंत्रित कर पाने में असमर्थ होते हैं। यद्यपि ऊँटों में बच्चों का जन्म फरवरी अथवा मार्च तक हो जाता है, किन्तु कुछ ऊँटों में ये अप्रैल या मई तक भी हो सकता है। ऐसे बच्चो को राजस्थान की अत्यधिक गर्मी का सामना करना पड़ सकता है। यदि ऐसे बच्चों पर पर्याप्त ध्यान न दिया जाये तो उष्म तापमान पर न केवल बच्चे का विकास प्रभावित होता है, रोग प्रतिरोधी क्षमता का भी पर्याप्त विकास नहीं हो पाता है। इसके अलावा रोग होने की ज्यादा संभावना, कम चारा खाना, शारीरिक विकास दर में कमी इत्यादि लक्षण दिखाई देते हैं।

प्रबंधन : गर्मी के दिनों में नवजात को छाया वाली व हवादार जगह पर रखे व पीने के लिए पर्याप्त पानी का इंतजाम करें। यदि संभव हो तो बाड़े में कूलर या पंखे का इंतजाम करे।

अत्यधिक ठण्ड के महीनों में जैसे दिसंबर या जनवरी में जन्मे बच्चों को तेज ठण्ड में रखने पर निमोनिया या दस्त भी हो सकता है, इसलिए इन्हें जन्म के तुरंत बाद कपडे से पोंछ कर सुखा लें। नवजात बच्चों के फेफड़ो में संक्रमण ठन्डे वातावरण में तेजी से फैलता है। इसके अलावा ठंडी हवा में श्वास लेने पर खांसी व जुकाम जल्दी होने की संभावना रहती है व विषाणु व जीवाणु का संक्रमण फैलने में मदद मिलती है। ठण्ड से बचाव के लिए नवजात को बंद बाड़े में रखें, जहा पर सीधी हवा न आती हो व गर्मी के लिए पुराने कम्बल से लपेट दे व नीचे चारे या कपड़ों का गद्दा बिछाना चाहिए।

4. त्रुटिपूर्ण प्रबंधन

नवजात बच्चों में मृत्युदर उन बाडों में ज्यादा दिखाई देती है जहां पर जानवरों की संख्या अधिक होती है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि अधिक संख्या में जानवरों के होने पर बच्चो की तरफ कम ध्यान दिया जाता है। ऐसे बाड़ों में यह भी देखा गया है कि बच्चो को माता ऊँटनी का पहला गाढ़ा दूध नहीं मिल पाता, जिससे उनमे बीमारियों से लड़ने की ताकत कम होती है।

5. प्रसवकालीन मृत्युदर

ज्यादातर प्रसवकालीन मृत्युदर के लिए पहली बार गर्भाधान हुई ऊँटनियों में जटिल अथवा कष्टप्रद प्रसव एक प्रमुख कारण है। इसके अलावा ऊँटों में इन ब्रीडिंग या अन्तः प्रजनन होने पर भी प्रसवकालीन मृत्युदर बढ़ने का खतरा रहता है। सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे कि लोहा, सेलेनियम, ताम्बा व जस्ता की कमी भी प्रसवकालीन मृत्युदर के बढ़ने के लिए कारणीभूत है। प्रसवकालीन मृत्युदर में जटिल या कठिन प्रसव व ऑक्सीजन की कमी एक महत्वपूर्ण कारण है व कुछ मात्रा में संक्रमण व जन्मजात विकृतिया कारणीभूत होती है।

i. जटिल या कठिन प्रसव

जटिल प्रसव के दौरान जन्मजात बच्चो में जख्म हो सकते हैं जैसे कि पसलियों का टूटना या विस्थापित हो जाना, रीढ़ की हड्डी का टूटना, जबड़े का टूटना, डायफ्रम अथवा मध्यपट का फटना या हर्निया, पैरो में फ्रैक्चर, जिगर का फटना, त्वचा के नीचे रक्तस्त्राव, अंदरूनी रक्तस्त्राव इत्यादि की वजह से बच्चे का मरा हुआ पैदा होने की संभावना होती है।

ii. ऑक्सीजन की कमी

जटिल प्रसव व दीर्घकालीन प्रसव के दौरान बच्चे में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है, जिससे बच्चे में फेफड़ो, सांस नलियों व हृदय पर रक्तस्राव के लक्षण दिखाई देते हैं।

iii. संक्रमण

जैसे कि गर्भपात में संक्रमण एक महत्वपूर्ण कारण है किन्तु प्रसवकालीन मृत्युदर में संक्रमण मात्र 3 से 15 प्रतिशत मामलों में होता है। ट्रूपेरेल्ला पायोजेनेस, बेसिलस स्पीशीज, बोवाइन वायरल डायरिया वायरस, ब्रूसेल्ला अबोर्टस, कोक्सिएल्ला बुरनेटाई, फंगस, लेप्टोस्पिरा, नेओस्पोरा, पास्तुरेल्ला व साल्मोनेला का संक्रमण नवजात बच्चो में संक्रमण के प्रमुख कारक है।

प्रबंधन

i. समुचित जानकारी

ऊँट पालकों को नवजात बच्चे की देखभाल व प्रबंधन के बारे में समुचित जानकारी होना अत्यंत जरुरी है। इसके लिए उन्हें राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केंद्र में प्रकाशित तकनीकी व विस्तार पत्रकों से जानकारी लेनी चाहिए। साथ ही केंद्र द्वारा आयोजित किसान गोष्ठियों व सम्मेलनों में नवजात बच्चे की देखभाल के बारे में जानकारियाँ उपलब्ध करायी जाती है।

ii. बीमारियों का प्रबंधन

नवजात बच्चों में होने वाली संक्रामक बीमारियों के बारे में ऊँट पालकों को जागरुक होना चाहिए व बीमारी के लक्षणों के दिखाई देने के बाद तुरंत पशुचिकित्सक की सहायता से उपचार शुरू कर देना चाहिए।

iii. प्रजनन में सावधानी

कभी भी नजदीकी सम्बन्ध वाले या सगे सम्बन्धी पशुओं को एक दूसरे के साथ प्रजनन में प्रयोग नहीं करना चाहिए। प्रजनन के लिए यथासंभव बाहरी नर जिसके वंश के बारे में पता हो, का प्रयोग करे।

iv. ब्यात के दौरान सावधानी

ब्यात के दौरान नवजात बच्चे का पूरा ध्यान रखना चाहिए। ब्याने के तुरंत बाद बच्चे की नाल काटकर सफाई करनी चाहिए व तुरंत उस पर एंटीसेप्टिक लोशन जैसे कि टिंचर आयोडीन लगाना चाहिए। बच्चे को खड़ा करने में व दूध पीने में सहायता प्रदान करनी चाहिए। यदि किसी जानवर में जटिल प्रसव हो रहा हो तो ऐसे में पूरी सावधानी के साथ बच्चे को धीरे–धीरे बाहर निकालें व ज्यादा बल प्रयोग न करें। ऐसे मामलों में पशु चिकित्सक की सहायता लेना अत्यंत जरुरी है। इसके अलावा प्रसव के दौरान होने वाले दर्द के लिए दर्दनिवारक इंजेक्शन माँ व बच्चे दोनों को लगाया जा सकता है।

"अखिल भारत के परस्पर व्यवहार के लिये ऐसी भाषा की आवश्यकता है जिसे जनता का अधिकतम भाग पहले से ही जानता समझता है।"
- महात्मा गाँधी।

प्रोबॉयोटिक की उपयोगिता : कल, आज और कल

अमिता रंजन[1], राकेश रंजन[2] एवं लक्ष्मीकांत[3]

[1]सहायक आचार्य, [2]प्रधान वैज्ञानिक, [3]स्नात्कोत्तर विद्यार्थी

[1,3]राजस्थान पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर

[2]भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

पिछले 2–3 दशकों से प्रोबायोटिक शब्द स्वास्थ्य–लाभ की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण स्थान पा चुका है। दरअसल इसका चलन कुछ शोधों के बाद तेजी से बढ़ने लगा – जैसे टिसेर नामक वैज्ञानिक ने पाया कि स्तनपान करने वाले नवजात शिशुओ के पेट में फॉर्मूला आधारित दूध पीने वाले नवजात की अपेक्षा बाइफिडोबैक्टिरिया की संख्या अधिक होने के कारण उनमें डायरिया का प्रकोप काफी कमी होता है।

धीरे–धीरे ऐसे शोधों ने अन्य वैज्ञानिको का ध्यान आकर्षित किया एवं इनकी महत्ता कुछ अन्य बीमारियों में भी लक्षित होने लगी। सामान्यता प्राबायोटिक को फूड एवं एग्रीकल्चर ऑर्गेनाइजेशन द्वारा इस प्रकार परभाषित किया गया है जो सर्वमान्य है –वैसे जीवित सूक्ष्मजीवी (मुख्यतः जीवाणु फफुँद–यीस्ट या मोल्ड) जो उचित मात्रा में मुख द्वारा लेने पर शरीर को स्वास्थ्य–लाभ प्रदान करता है, प्रोबायोटिक कहलाते हैं। इसे दूसरे शब्दो में इस प्रकार कह सकते है "ऐसे जीवाणु जो हमारे शरीर (पेट या आंतों) में प्राकृतिक रूप से पाये जाने वाले मित्र जीवाणुओं से मेल खाते है एवं स्वास्थ्य लाभ प्रदान करते है, उन्हें प्रोबायोटिक कहते हैं।

सर्वप्रथम मेकनिकॉफ नाम के (नोबेल पुरस्कार प्राप्त) वैज्ञानिक ने इसकी महत्ता सिद्ध की। उन्होंने इसकी तुलना जुगाली करने वाले जानवरों के रूमेन में आसान पाचन–क्रिया से की जो रूमन में उपलब्ध सूक्ष्मजीवों द्वारा सभंव प्रतीत हुआ। उनकी यह अवधारणा है कि कुछ उपयोगी 'गट माइक्रोब्स' जो कि पारंपरिक खाद्य पदार्थों (किण्वित दूध, दूध से बने प्रोडेक्ट) में उपस्थित हैं, उनमें अनुपयोगी एवं हानिकारक माइक्रोब्स की वृद्धि रोकने एवं उन्हें नष्ट की क्षमता विद्यमान होती है। बाद के वर्षो में शोधों द्वारा इसकी पुष्टि हुई एवं कई बिमारियों के इलाज में प्रोबायोटिक के उपयोग की संभावनाओं की तलाश की जाने लगी।

प्रोबायोटिक के स्त्रोत

पारंपरिक तरीकों से घर में बनाये जाने वाले, सरलता से उपलब्ध खाद्य पदार्थो यथा–दही, योगहर्ट, श्रीखण्ड, किण्वित दूध इत्यादि एवं बाजार में उपलब्ध लेबन, चीज विभिन्न पेय पदार्थ (अल्कोहल युक्त) प्रोबायोटिक के मुख्य स्त्रोत है। विभिन्न जीवाणुओं, फुफदों के नाम जो प्रोबायोटिक के रूप में उपयोग में लाये जाते है,जो कि इस प्रकार है :–

1. जीवाणुओं में दो मुख्य प्रकार है:-

(क) लैक्टोबैसिल– लै. एसिडोफिलस, लै. फरमेन्टम, लै. लैक्टस, लै. दृकेसी, लै. ब्रेविस आदि

(ख) बाइफाईडोबैक्ट्रियम– बा. बाइफिडम, बा. लौंग्म, बा. इन्फैटिंस, बा. लैक्टिस आदि

2. इस्ट एवं मोल्ड्स (फफुँदों) में प्रमुख है:-

सैक्रोमाइसेस सर्भीसी, सै.बोलैडी, एस्परजिलस नाइजर, एस्परजिलस ओराइजी जानवरों के लिए उपयोगी प्रोबायोटिक सूक्ष्मजीवी निम्न हैं–

- लैक्टोबैसिलस गैलिनेरम
- इन्टेरोकोकस फिकैलिस
- स्पोरोलैक्टोबैसिलस इन्सुलिनस
- बैसिलस सेटियस वार टवाई

प्रोबायोटिक की क्रियाविधि एवं आदर्श प्रोबायोटिक के गुण :-

इनकी कार्यशैली प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से शरीर को लाभान्वित करती है। शरीर के पाचन तंत्र या अन्य अंगो में

प्राकृतिक रूप से मित्र सूक्ष्मजीवी पाये जाते हैं। प्रोबायोटिक पाचन तंत्र के सूक्ष्मजीविओं में पी.एच. को सतुलित करके, सूक्ष्मजीवी – सूक्ष्मजीवी एवं प्राणि–सूक्ष्मजीवी के बीच समुचित समन्वयन द्वारा उपयोगी बैक्टिरिओसीन का संश्लेषण एवं छोटी श्रृंखला वाले वसीय अम्लों का निर्माण, I_gA का स्त्राव तथा इम्यूनोमोडूलेशन द्वारा स्वास्थ्य लाभ प्रदान करते हैं। कुछ प्रोबायोटिक पेट के इपिथिलीयल या सब–इपिथिलियल कोशिकाओं की संरचना को नियमित करके प्रभाव उत्पन्न करते हैं।

एक आदर्श प्रोबायोटिक के गुण निम्न हैः–

(क) इसके मुख द्वारा अधिग्रहण के पश्चात् अम्ल या पित्त को सहन करने की क्षमता का होना आवश्यक है।

(ख) हानिकारक बैक्टीरिया के विरूद्ध एंटीमाइक्रोबियल क्रिया का होना।

(ग) प्रोबायोटिक में म्यूकोशल एवं इपिथिलीयल सतहों पर चिपकने का गुण होना आवश्यक है ताकि रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़े, हानिकारक जीवाणुओं पर काबू पाया जा सके और पेट में हानिकारक जीवाणु को पनपने से रोका जा सके।

प्रोबायोटिक के न्यूनतम प्रभावी सांद्रता (मिनीमम इफेक्टिव कान्संट्रेशन) या खुराक (डोज) को निर्धारित किया गया है, जो 10^6 कोलोन फार्मिंग यूनिट प्रति मि.ली. या प्रति ग्राम एवं कुल 10^8–10^9 प्रोबायोटिक माइक्रोब्स हैं। जीवाणुओ की प्रजाति शुद्ध एवं जीवित होन आवश्यक है तभी इसके प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होते हैं। अंतिम रूप से बने प्रोबायोटिक युक्त खाद्य पदार्थो में उनकी उचित संख्या का निर्धारण अभी शेष है तथा मानव में इनकी उपयोगिता पर शोधों को दिशा देने की आवश्यकता है।

प्रोबायोटिक के लाभ/प्रभाव :– आज के आधुनिक युग में भाग दौड़ भरी दिनचर्या तनाव एवं चिंता को जन्म दे रही है। इसके फलस्वरूप नान कॉम्युनिकेबल रोग तेजी से अपने पांव पसार रहा है। इन बीमारियों का लाइफ स्टाइल रोग या बीमारी की संज्ञा दी गई है। इनमें प्रमुख है इरिटेबल बॉवल सिंड्रोम, उच्च रक्तचाप संबंधी रोग, मधुमेह (टाइप–2), मोटापा, कैंसर एवं लैक्टोज असहनशीलता आदि।

इन बीमारियों में मुख्यतः शरीर की प्रतिरोधक क्षमता कमतर हो जाती है, शरीर को पर्याप्त पोषक तत्त्वो की आपूर्ति बाधित हो जाती है, आंतों की कार्यप्रणाली अवरूद्ध हो जाती है एवं शरीर आन्तरिक तौर पर क्षीण–दुर्बल हो जाता है। प्रोबायोटिक इन बीमारियो के उचित समाधान हेतु एक विकल्प सिद्ध हो रहा है। यह विभिन्न रोग प्रतिरोधक क्षमता के लिए जिम्मेवार कोशिकाओं को उत्तेजित कर, नये इम्यूनोग्लोबुलिन संश्लेषित कर, इन्फ्लामेटरी साइटोकाइनस के संश्लेषण को रोककर विभिन्न जीवाणुरोधक तत्वों का निर्माण करके शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता में अभूतपूर्व वृद्धि करता है एवं इन बीमारियों को रोकने में प्रारंभिक तौर पर सफल सिद्ध हुआ है।

जानवरों में महत्ता

जानवरों में इसके उपयोग की दिशा में कार्य करने की नितांत आवश्यकता है। कुछ प्रोबायोटिक केवल जानवरों हेतु काम में लाये जाते है। हाँलाकि बच्चों में होने वाले दस्त, आन्त्र सूजन संबंधी रोग, संक्रामक दस्त जीवाणु –नाशक दवाओं द्वारा भी ठीक किया जा सकता है। कुछ सूक्ष्मजीवी फ्री रेडिकल्स तथा स्ट्रेस हार्मोन आदि की अत्याधिक वृद्धि को रोकने में भी कारगर सिद्ध हुआ है। परन्तु अन्य बीमारियों में इसका लाभ किस प्रकार लिया जाना चाहिए यह एक प्रश्न है।

निष्कर्ष

ग्लोबलाइजेशन के इस युग में जीवनशैली जनित रोगों को रोकने हेतु तथा तनाव के कारण उत्पन्न पेट की बीमारियों को दूर करने के लिए प्रोबायोटिक कारगर सिद्ध हो सकता है। इसे बिना किसी विशेष दुष्प्रभाव के लम्बे समय तक लिया जा सकता है। हाँलाकि आगामी दिनो में आंत्र कोशिकाओं पर इसका जुड़ाव इसके विकास एवं अन्य प्रभावों का अध्ययन भी आवश्यक प्रतीत होता है। इसमें इनकी उचित खुराक का निर्धारण कब, कितने समय तक, कितनी मात्रा में लेना आदि भी शामिल है। इसके साथ ही ऐसे उत्पादों को सुरक्षा मानकों की दृष्टि से जाँचा जाना भी आवश्यक है।

ऊँट के पग

आर.के.सावल[1] एवं मु.मतीन अंसारी[2]
[1]निदेशक, [2]वैज्ञानिक
[1,2]भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

ऊँट दुनिया के कुछ सबसे कठिन वातावरण से आते हैं। वे उत्तरी अफ्रीका में गर्म, शुष्क सहारा रेगिस्तान और पूर्वी और मध्य एशिया के हिस्सों में स्थित गोबी रेगिस्तान में पैदा हुए। इन क्षेत्रों में दिन का तापमान नियमित रूप से 50 डिग्री सेल्सिअस से अधिक हो जाता है, जबकि सर्दियों में रेगिस्तान की रात में तापमान ठंड से नीचे गिर जाता है, जो गोबी रेगिस्तान में शून्य से 40 डिग्री सेल्सिअस तक नीचे गिरता है। इन क्षेत्रों में भूमि अधिकतर रेतीली या पथरीली/कठोर, चट्टानी मिट्टी है। ऐसे स्थानों पर चलने व भार दोनों के लिए ऊँट का मानव आवश्यकताओं के आवागमन हेतू मरूस्थली परिवेश में विशेष महत्व है।

पग की संरचना : ऊँट के लंबे पैर मजबूत होते हैं और शक्तिशाली मांसपेशियों के कारण लंबी दूरी तक के लिए भारी भार ले जाने की क्षमता रखते है। यह मध्यम गति पर चलता है, प्रत्येक पैर की अंगुली को सामने बढ़ता है। ऊँट एक व्यापक पैड पर चलता है जो अपने पैर की दो उंगलियों को जोड़ता है। जब ऊँट जमीन पर अपना पैर रखता है तो पैड की तरह यह कुशन फैलता है।

बड़े व्यापक 'लोचदार' पैड के सामने प्रत्येक पैर की अंगुली में एक कठोर नाखून होता है जो एक खुर की छाप देता है जो की ऊँट के लिए महत्वपूर्ण संरचना हैं। बड़े, चौड़े पैर आधे में विभाजित होते हैं, और दोनों हिस्सों को वेबबिंग के नीचे शामिल किया जाता है। प्रत्येक पैर फैलता है और चमकता है क्योंकि ऊँट उनपर अपने वजन को रखता है। ऊँट के पैरों के पैड, मोटे सुरक्षात्मक तलवों से ढके होते हैं। प्रत्येक पैर के अंदर, एड़ी की ओर, वसा की एक मोटी गेंद होती है जो आसानी से रेगिस्तान की रेत पर चलने के लिए महत्वपूर्ण संरचना हैं। अन्य पशुओं (उंगुलेट्स) जैसे गाय, भैंस, भेड, बकरी, इत्यादी के लिए खुदाई वाले पैरों से रेत पर चलना संभव नहीं है। ऊँटों में इस व्यापक चमड़े के पैड का लाभ अपने वजन को व्यापक सतह क्षेत्र में फैलाना है और उनके पैर ढीले रेतीले मिट्टी में धंसते नहीं हैं। पैरों में मोटी पैडिंग ऊँट को चट्टानी और गर्म रेत से सुरक्षित करती है।

ऊँट के प्रत्येक पैर में दो उंगलियों होती हैं जिस पर एक कठिन नाखून होता है जो की एक खुर के समान लगता है। पैरों के नाखून किसी वास्तु/पत्थर इत्यादी से टक्कर के परिणाम स्वरूप नुकसान से पैरों की रक्षा करते हैं। पैर की उंगलियां नीचे एक जाल नुमा गुथी से जुडी होती हैं, और जब ऊँट चलता है वे जानवर के वजन से समतल होकर बाहर की और रेत/बर्फ/धरती पर फैलता है व समान रूप से ऊँट के वजन वितरित करता है जिस से शरीर धसने/डूबने से बच जाता है। यह पैड बहुत लोचदार ऊतक से बना होता है व इसकी की मोटाई के कारण ग्रीष्म ऋतू मे रेत की तपिश से बचाता है। इस पैड की कोमलता के कारण रेतीली धरती पर भी ऊँट आसानी से लंबी दूरी तह कर लेता है।

ऊँट का चलना : जब ऊँट चलता है तब उसके शरीर के एक तरफ के दोनों पैर चलते हैं, और फिर दूसरी ओर के पैर। पैर का तला समतल और विस्तृत भी होता है जिस कारण से पग रेत में धसने/डूबने वह शारीर का बचाव करने मे मदद करते हैं। पैर की यह हरकत, एक घुमावदार,

रॉकिंग गति पैदा करता है। ऊँट की तरह ऊँचा व लंबा जानवर, छोटे जानवरों की तुलना में, अक्सर रोटरी पैदल घूमते हैं।

यह पैड ऊँटों को ठोस चट्टानों और अथक लंबी दूरी पर चलने में मदद करता है और बाहरी पर्यावरण के प्रति असंवेदनशील रहता है। इससे उन्हें शरीर के एक तरफ संतुलन को स्थानांतरित करने में भी मदद मिलती है जबकि दूसरी ओर लंबे पैर एक निलंबित चरण में होते हैं। एक तरफ रोटरी गति में वे दोनों पैरों को आगे बढ़ाते हैं और दूसरी ओर वे दोनों पीछे होते हैं। पैरों और छाती के जोड़ों पर मोटी, व्यापक एकमात्र पैड और मोटी कॉलोसिटी होती है; जिस पर यह घुटने टेकने की स्थिति में रहता है। पैड भी इसे रेगिस्तान की रेत की गर्मी का सामना करने में सक्षम बनाता है। यह उड़ने वाली धूल के खिलाफ अपने नाक को बंद करने में भी सक्षम है और इसकी आंखें की पलकों पर बाल द्वारा संरक्षित हैं।

विशेष पग के लाभ : ऊँट के पैर की संरचना जीव के पर्यावरण के लिए अच्छी तरह अनुकूलित करती है। चौड़े, फैलने वाले पैर की उंगलियों को ऊँट को ढीले और स्थानांतरित रेत में धंसने से रोकते हैं, और पैर की उंगलियों के बीच वेबबिंग होने से उन्हें धरती की सतह पर एकजुट करती है ताकि धंसने का प्रतिरोध हो सके। पैड की मोटी परत रेत की तपिश/ठंडक के खिलाफ बाधा प्रदान करती है व ऊँट के पग के तलवों को जलने से बचाती है। वसा की भीतरी गेंद भी मदद करता है, क्योंकि इसका कुशनिंग प्रभाव होता है। पैड जानवर को ढीले रेत पर उसी तरह से समर्थन करता है जैसे एक स्नोशो एक व्यक्ति को बर्फ पर चलने में मदद करता है एवं जानवर को मजबूती से धरती को समझने में सक्षम बनाता है।

पग के तलवे का छेदन/चोट लगना : कांटे, नाखून, कांच, धातु के तार, हड्डियों, तेज चट्टान आदि द्वारा पग के तलवे का छेदन हो सकता है। रेसिंग के लिये इस्तेमाल किये जाने वाले ऊँटो अक्सर पीड़ित होते देखे गए हैं। उनमे पैर की अंगुली के नाखूनों से, खासकर जब वे रेत की बजाय किसी न किसी ठोस जमीन/पत्थर से टकरा जाते हें। उष्ट्र दौड में ऊँटों के पगों पर अधिक ज़ोर पड़ने के कारण, पीछे के पग अधिक प्रभावित होते हें। संक्रमण के कारण कभी कभी पग के तलवे भी अलग होने लगते हें जिससे पशु को चलने मे कठिनाई होने लगती है। तलवे के फ्लैप मे रेत/बजरी या अन्य कण आ जाने के कारण पशु को बेचैनी और दर्द प्रभावित करता है जिस से उसकी चाल पर अधिक प्रभाव पड़ता है व शरीर कमजोर होने लगता है।

पगों पर वजन : एक वयस्क ऊँट का वजन लगभग 600 से 800 किलो तक होता है। चलते हुए तो पूरे शरीर का वजन चारों पगों पर बराबर बंट जाता है परन्तु नृत्य करते समय शरीर का पूरा भार पिछले पगों पर आ जाता है। ऐसे पशुओं की मांस पेशीयां का अधिक मजबूत होना आवश्यक है ताकि पगों को कोई चोट ना पहुंचे। आहार भी अधिक पुष्टिकार देना अनिवार्य होगा ताकि आवश्यक लवणों की कमी पूरी हो सके, क्यूंकि अभ्यास करने वाले पशुओं को इनकी अधिक आवश्यकता होती है।

प्रशिक्षण : ऊँट को बैठना, चलना, दौड़ना, गाड़े से भार ढोना, सावरी को बिठाना/उतरना, खेती करने के लिए खेत में हल चलाना, बुवाई करना, पाटा लगाना और ऊँट को नृत्य इत्यादि सिखाया जा सकता है। कुछ समय के प्रशिक्षण के पश्चात, ऊँट अपने मालिक/स्वामित्व को पहचानने लगता है। पशु पालक वही जानवर चुनते हैं जो सांस्कृतिक रूप से स्वीकार्य, प्रशिक्षित, रखरखाव और लाभदायक हो ऊँट में वो सभी गुण हैं इसलिए इसका प्रयोग मरू प्रदेशों में अधिक किया जाता है। इसके अतिरिक्त ऊँट स्थानीय चारा जो जलवायु के अनुकूल हो को ग्रहण कर लेता है और क्षेत्र में बीमारियों से प्रतिरोधी होने की संभावना भी रखता है। सामाजिक या धार्मिक परम्पराओं के अनुरूप ऊँट ऐसा पशु है जो स्वामित्व को समझने लगता है व उसे सिखाना भी आसान हो जाता है। नृत्य सिखाने के लिए पशु पालक को बहुत ही धैर्य रखना पड़ता है, परन्तु कुछ समय पश्चात इसके अच्छे परिणाम मिलने लगते हैं। 2–3 वर्ष की आयु में दौड़, नृत्य सीखने पर अच्छे परिणाम देखे गये हैं।

चिन्ताएँ : ऊँट के मुलायम, लचीले पैर गर्म, रेतीले रेगिस्तान में चलने के लिए आदर्श हैं। बहुत नरमता इन्हें ऐसी धरती के लिए अच्छी बनाती है, जबकि वहां विभिन्न खतरों के प्रति संवेदनशील होना स्वाभाविक है। घरेलू ऊँट जो की लंबे समय तक भार ढोते हैं; असुरक्षित सड़क मार्गों पर चलने से सूजन पैर पर लंगर कर सकती हैं। नरम एकमात्र तेज चट्टानें, तार, कांच, नुकीली लकड़ी के किनारे, लंबे कांटे और अन्य ऐसे खतरों से होने वाली चोट के लिए

जोखिम भी है जिस से कोई कीटाणु से संक्रमण से बचा जा सकता है। घावों कीटाणु शोधन मदद कर सकते हैं, क्योंकि ऊँट एक सुरक्षात्मक कवर के साथ पैर लपेट सकते हैं।

रेतीले रेगिस्तान में चलते समय ऊँट का प्रत्येक पैर फैलता है क्योंकि ऊँट के पग की मांस पेशीयां नरम व लचीली होती हैं जो की चलने के लिए आदर्श है। सख्त सड़कों पर पग की कोमलता का नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। घरेलू ऊँट जो लंबे समय तक भार ढ़ोते हैं उनके पग में असुरक्षित सड़क मार्गों पर चलने से कांटे, नाखून, कांच, धातु के तार, हड्डियों, तेज चट्टान आदि द्वारा पैरों में छेद/दरार पड़ना/फटना हो सकता है, ऐसे खतरों से होने वाली चोट से सूजन आ सकती है। घावों के समय पर इलाज करने से एक सुरक्षात्मक कवर प्रदान किया जा सकता है। नाखूनो के बढने से चलने में असुविधा हो सकती है, ऐसे में लंबे नाखून को कतरना/फाइल करना चाहिए ताकि पशु सुविधाजनक चल सके। पशु पालक अपने ऊँट के पगों की समय–समय पर अवश्य जांच करें।

सारांश

ऊँट के पग सृष्टि एक अद्भुत संरचना है, जिस कारण ऊँट मानव कल्याण में योगदान दे रहा है। एक वयस्क ऊँट लगभग 4 से 6 क्विंटल का होता है वह अपनी पीठ पर लगभग 4–5 क्विंटल (लगभग शरीर भार तक) व ऊँट गाड़े में 20 क्विंटल (शरीर भार का 4–5 गुना) तक भार खींच सकता है, जिसके लिए मज़बूत पगों की आवश्यकता होती है जो उष्ट्र में विद्यमान हैं।

"भारतवर्ष में सभी विद्याएँ सम्मिलित परिवार के समान पारस्परिक सद्भाव लेकर रहती आई हैं।"
- रवींद्रनाथ ठाकुर

राज्य पशु : ऊँट

योगेश आर्य[1], उमेश कुमार प्रजापत[2], मंगेश कुमार[1], निर्मला सैनी[3] एवं एच.के.नरूला[3]

[1]स्नातकोत्तर अध्येता, [2]शोधार्थी, [3]प्रधान वैज्ञानिक

[1,2,3]भाकृअनुप–केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय परिसर, बीकानेर

देश में ऊँटों की संख्या में राजस्थान प्रथम स्थान पर है। 19वीं पशुगणना के अनुसार राजस्थान में लगभग 3.25 लाख ऊँट हैं। "रेगिस्तान का जहाज" कहलाने वाला ये पशु कैसी भी विकट परिस्थितियों में जिंदा रह सकता हैं। ऊँटनी के दूध का औषधीय महत्त्व होता हैं। इसका उपयोग मधुमेह, दमा, पीलिया, तपेदिक और एनीमिया में लाभदायक बताया गया हैं।

उष्ट्र प्रजनन प्रोत्साहन योजना –

30 जून 2014 को राजस्थान सरकार ने ऊँटों के संरक्षण के लिए ऊँट को राज्य–पशु का दर्जा दिया है। साथ ही ऊँटों में प्रजनन को बढ़ावा देने के लिए "उष्ट्र प्रजनन प्रोत्साहन योजना" के अंतर्गत ऊँटनी के ब्याने पर तीन किश्तों में कुल 10,000 रूपये की आर्थिक सहायता दी जाती हैं।

ऊँट महोत्सव –

ऊँट पालन को बढ़ावा देने के लिए प्रतिवर्ष बीकानेर में "ऊँट महोत्सव" का आयोजन होता है जिसमें ऊँट की सजावट, बाल कतरन डिजाइन, ऊँट दौड़ और ऊँट नृत्य के लिए पुरस्कार दिए जाते हैं।

ऊँट को दिया जाने वाला आहार एवं प्रबंधन–

ऊँटों को रोगों से बचाने के लिए संतुलित एवं पौष्टिक आहार दिया जाना चाहिए। सान्द्र आहार में 2 प्रतिशत मिनरल मिक्सचर भी मिलाना चाहिए। मटर का भूसा, मूंग–मोठं और ग्वार चारा, सरसों एवं तारामीरा इत्यादि खिलाया जाता हैं। इसके अलावा मक्का, जई, बाजरा, जौ, बिनौला, गेंहू की चोकर एवं पिसे हुए चने के साथ आहार में नमक आवश्यक रूप से मिलाना चाहिए। ऊँट को प्रतिदिन 20–40 लीटर पीने का साफ पानी दिया जाना चाहिए। ऊँट के आवास की साफ–सफाई की जानी चाहिए।

दाना मिश्रण का निर्माण–

दाना मिश्रण बनाने के लिए एक या एक से अधिक दानो को निश्चित अनुपात/मात्रा में मिलाकर संतुलित दाना मिश्रण तैयार किया जाता है जो सस्ता, पौष्टिक , संतुलित होना चाहिए।

दाना–मिश्रण में शामिल पोषक तत्वों की मात्रा–

पोषक तत्व	मात्रा
जौ, गेंहू, मक्का, बाजरा, जई इत्यादि अनाज	30–35 प्रतिशत
खल (सरसों या बिनौला या मूंगफली की खल)	30–35 प्रतिशत
चापड एवं चूरी (गेंहू की चापड व मूंग चूरी)	30–35 प्रतिशत
खनिज मिश्रण	2 प्रतिशत
नमक	1 प्रतिशत

ऊँटो का स्वास्थ्य–

हर 3 माह के अन्तराल पर ऊँटों का कृमिनाशन करवाया जाना चाहिए। ऊँटों में वैसे तो बहुत सारे रोग होते हैं परन्तु मुख्यतया इन दो रोगों का जिक्र करना अति आवश्यक हैं–

सर्रा रोग–

सर्रा रोग को 'तिबरसा' और 'गलत्या' नाम से भी जाना जाता हैं। यह रोग रक्त परजीवी "ट्रिपेनोसोमा इवांसाई" से होता हैं। यह परजीवी, रक्त चूसने वाली मक्खी 'टेबेनस' के काटने से फैलता है। इस रोग के प्रमुख लक्षणों में बुखार, एनीमिया और दुर्बलता प्रमुख है। लम्बे समय तक चलने वाली इस बीमारी में कूबड़ भी गायब हो जाता है और जांघ की पेशियों का भी अपक्षय होता हैं। कभी–कभी ऊँट के पूरे शरीर पर सूजन आ जाती है एवं कॉर्निया अपारदर्शी हो जाती हैं।

ऊँट में सर्रा रोग के लक्षण दिखाई देने पर तुरंत वेटरनरी डॉक्टर से संपर्क करना चाहिए। वेटरनरी डॉक्टर की सलाह पर प्रयोगशाला में ताजा रक्त के नमूने अथवा रक्त स्मीयर की 'जीम्सा स्टेंनिंग' करके सूक्ष्मदर्शी में परजीवी की उपस्थिति सुनिश्चित की जाती हैं। सर्रा रोग की पहचान होते ही वेटरनरी डॉक्टर से उपचार करवाना चाहिए। राजस्थान सरकार ने भी "सर्रा नियंत्रण कार्यक्रम" चला रखा हैं।

सर्रा से बचाव के तरीके-

1) ऊँट के आवास की साफ सफाई रखी जानी चाहिए तथा ऊँट को मक्खियों मुख्यतः टेबेनस मक्खी से बचाना चाहिए एवं कीटनाशक का छिड़काव करना चाहिए।
2) सर्रा रोग बाहुल्य क्षेत्रों में वेटरनरी डॉक्टर की सलाह पर 'एंट्रीसाइड प्रोसाल्ट' इंजेक्शन लगाकर भी ऊँटों को सर्रा रोग से बचाया जा सकता हैं।

मेन्ज अथवा खाज-

ऊँटों में मेन्ज का रोगकारक "सार्कोपटीज केमेली" होती हैं। ये रोग ज्यादातर सर्दियों में होता है। रोग ग्रसित भाग के बाल उड़ जाते हैं, चमड़ी काली पड़ जाती हैं और ऊँट अपने शरीर को किसी दीवार से रगड़ता है।

मेन्ज रोग की पहचान के लिए प्रयोगशाला में रोग ग्रसित भाग की, त्वचा की खुरचन को 10 प्रतिशत पोटैशियम हाइड्रोक्साइड विलयन में 24 घंटे रखकर उसके पश्चात् सूक्ष्मदर्शी में सार्कोपटीज माईट की उपस्थिति देखी जाती हैं।

रोग के उपचार के लिए वेटरनरी डॉक्टर की सलाह पर 0.25 से 0.75 प्रतिशत "सुमीथिओन" विलयन का स्प्रे पम्प से पहले दिन शरीर के आधे भाग पर और दूसरे दिन शेष आधे भाग पर छिड़काव किया जाता है।

मेन्ज से बचाव के तरीके-

1) ऊँट के शरीर की साफ–सफाई रखी जानी चाहिए
2) वेटरनरी डॉक्टर की सलाह पर 'आईवरमेक्टिन' इंजेक्शन लगाया जा सकता है, जिससे अन्तः और बाह्य परजीवी दोनों से बचाव हो जायेगा।

विभिन्न प्रकार के आणविक चिह्नक: एक समीक्षा

बसंती ज्योत्सना[1], वेद प्रकाश[1], मु.मतीन अंसारी[1], शालिनी सुथार[2] एवं रामेश्वर लाल व्यास[3]

[1]वैज्ञानिक, [2]कनिष्ठ अनुसंधान अध्येता, [3]तकनीकी अधिकारी

[1,2,3]भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

आनुवांशिक भिन्नता जनसंख्या की मूल विशेषता है, जिसका उपयोग आनुवंशिक बनावट या घरेलू पशु प्रजातियों की आनुवंशिक क्षमता को हमारी आवश्यकताओं के अनुरूप बदलने के लिए किया जा सकता है। नस्लों के बीच और भीतर दोनों आनुवंशिक भिन्नता का प्रत्येक प्रजाति के भीतर विविधता के रूप में वर्णित किया गया है। विविधता मानकों के भीतर और बीच की गणना संरक्षण के लिए प्राथमिक नस्लों के चयन की अनुमति देती है। आनुवंशिक विविधता के अध्ययन वर्तमान और ऐतिहासिक विकासवादी प्रक्रियाओं की समझ प्रदान करते हैं, जो कि जैव विविधाता प्रणाली उत्पन्न करते हैं। जैव विविधता का संरक्षण, विभिन्न संरक्षण योजनाओं का एक महत्वपूर्ण घटक होना चाहिए। पिछले दशक में, जनसंख्या स्तर की प्रक्रियाओं के उच्चतम अध्ययन के लिए नए आणविक आनुवंशिक उपकरण उपलब्ध हुए हैं। डीएनए स्तर पर बदलावों को प्रकट करने वाले सभी चिह्नकों को आणविक चिह्नक (मार्कर) के नाम से जाना जाता है। पशुधन सुधार में आणविक चिह्नकों के संभावित अनुप्रयोग की समीक्षा आनुवंशिक परिवर्तनशीलता के आकलन के साथ–साथ जनसंख्या के भीतर और मध्य संबंध, प्रतिशत निर्धारण, संभावित बाधाओं और संयोजन असंतुलन के संबंध में की गई है। आबादी की आनुवंशिक विशिष्टता को एक से दूसरी जनसंख्या में सापेक्ष अनुवांशिक दूरी द्वारा माना जाता है। प्रोटीन बहुरूपता, जैसे उत्प्रेरक, रक्त समूह प्रणाली और एवं ल्यूकोसाइट एंटीजन, आनुवंशिक दूरी मापने के परंपरागत तकनीकियाँ थी, जिन्हें न्यूक्लियर एवं माइट्रोकोन्ड्रियल डीएनए स्तर की बहुरूपता के द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया है। विभिन्न आनुवंशिक तकनीकियों द्वारा डीएनए बहुरूपता का पता लगाया जा सकता है, जैसे कि आर. एफ. एल. पी., आर. ए. पी. डी., ए. एफ. पी., डी. एन. ए. फिंगरप्रिंटिंग, माइक्रोसैटेलाइट और सबसे नवीनतम माइक्रोअरेज।

1) रिस्ट्रीकशन फ्रेगमेन्ट लेन्थ पॉलीमार्फीजम, आर.एफ.एल.पी. (बंधन खंड विस्तार बहुरूपता आधारित विविधता)

जीनोम के चरित्रण एवं विश्लेषण हेतु प्रयोग में लाया जाने वाला यह प्रथम डीएनए आधारित चिह्नक है। इससे (ग्रौस) सकल परिवर्तन से लेकर एक वेस के बदलाव को आसानी से खोजा जा सकता हैं। इस विधि का व्यापक उपयोग डीएनए में बहुरूपता तथा अनेक प्रकार के जीवाणुओं, वनस्पती एवं पशु प्रजातियों की चरित्रण के लिए किया जाता है। अधिक मंहगा तथा अतिश्रम आधारित होने के कारण पालतु पशुओं के आण्विक डीएनए के चरित्रण के लिए इसका उपयोग सीमित रुप में किया गया है। इस तकनीक का उपयोग चुनिदां माइटोकॉड्रियल डीएनए खंडों के चरित्रण के लिए भी किया गया है।

2) आर. ए. पी. डी. (रैंडम एम्पलीफाईड पोलीमीर्फिक डीएनए)

इसका उपयोग अनेक प्रकार के जीव जन्तुओं के चरित्रण के लिए किया गया है। इस तकनीक में छोटे (10 वेस तक के) प्राइमर को बनाकर उसका उपयोग आण्विक डीएनए के पीसीआर से विस्तारण के लिए किया जाता है। इस तकनीक में बहुरुपता खोजे जाने का स्तर काफी उच्च होता है। जो इसकी मुख्य विशेषता है। संवर्धन की परिस्थितियों के अनुरूप पी सी आर के परिणाम बहुत संवेदनशील होते हैं। जिसके कारण प्रयोगशाला दर प्रयोगशाला तथा प्रयोगदर प्रयोग इसके परिणामों में भिन्नता होती है। जो इस पद्धति की सबसे बड़ी कमी है।

3) माइक्रोसेटैलाइट (एस.एस.आर.)

इसे सिम्पल सिक्वेंस रिपिट(एस एस आर) या सिम्पल टैंडम रिपिट (एस टी आर) के नाम से भी जाना जाता है। यह 6 या उससे कम वेस युग्म लम्बी डीएनए का सिक्वेंस

होता है। जो बारम्बार जीनोम में दोहराए जाते हैं और बिना किसी रूकावट के एक सिरे से दूसरे तक व्यवस्थित होते हैं। बारम्बार दोहराए गये दो या तीन न्यूक्लयोटाइड सिक्वेंस की लम्बाई को अनेक युकैरयोट के जीनोम में भिन्न पाया गया है। ऐसे सिक्वेंस हर 50000 से 60000 वेस युग्म(पेयर) में एक बार पाया जाता हैं। उच्च मात्रा में विविधता तथा जीनोम पर रैंडम विभाजन, जीन मैपिंग अध्ययनों के लिए इसे एक उपयोगी डीएनए मार्कर बनाता है, साथ ही साथ दो या उससे अधिक माइक्रोसेटैलाइट का एक साथ विश्लेषण संभव है, जो बड़ी मात्रा में नमुनों का आनुवांशिक विश्लेषण की संभवना पैदा करता है।

माइक्रोसैटेलाइट साधारण सिंक्वेंस का टैंडम रिपीट है। उसमें डाइन्यूक्लिोटाईड सबसे बहुल है। यह सभी उच्च प्राणियों एवं पशुओं में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। माइक्रोसैटेलाइट में बहुरूपता किसी लोकस पर दोहराए गये सिक्वेंस की भिन्नता के रुप में प्रदर्शित होता हैं। यह बहुरूपता पीसीआर विधि के द्वारा जीनोमिक डीएनए के (संवर्धन) एम्पलीफीकेशन में मौजूद विविधता के रूप में प्रकट होता है। यह प्रक्रिया किसी लोकस के विशेष रूप से चुने गये प्राइमर के द्वारा पूर्ण की जाती है। पहचान में सहुलियत, सिक्वेसं की सरल पहचान तथा बहुत कम मात्रा में डीएनए की जरूरत इस विधि के मुख्य फायदे हैं। इसके साथ ही साथ माइक्रोसेटैलाइट के डाटा को संख्या के रूप में वर्णित किया जा सकता है। जिसके कारण इसके आकड़ों का कम्प्यूटर आधारित प्रबंधन एवं विश्लेषण संभव है। गैर पीसीआर आधारित प्रणाली में इसका उपयोग मिनिसेटेलाइट प्रोब की तरह किया जा सकता है। माइक्रोसैटेलाइट का आनुवांशिक विविधता विभिन्न जनसंख्या समूहों की संरचना और बीच का अंतर, फाइलोजेनी एवं पैटरनीटी (पितृत्व) जाँच, आनुवांशिक एवं जनसांख्यिकीय इतिहास का मूल्यांकन जैसे बहुमुखी उपयोग संभव है। कुछ वर्षों से माइक्रोसेटेसलाइट बिन्दु आण्विक विश्लेषणों (जैसे जीनोम मैपिंग, आबादी की संरचना का विश्लेषण, वशांवली के प्रबंधन, फोरेंसिक अदालत विश्लेषण, पितृत्व सत्यापन इत्यादि) के लिए सबसे पसंदीदा मार्कर के रूप में स्थापित हुआ है।

माइक्रोसैटेलाइट चिह्नक कई विशेषताओं के कारण जनसंख्या स्तर के अध्ययनों के लिए आदर्श पाया गया है।

1. यह पूरे जीनोम में व्यापक रूप से वितरित होते है।
2. यह मुख्य रूप से गैर कोडिंग क्षेत्रों (रिजन) में पाया जाता है।
3. यह आमतौर पर निष्पक्ष (न्यट्रल) होते है।
4. माइक्रोसेटेसलाइट बिन्दु आबादी में प्रायः अति परिर्वतनशील होते है। और अन्य आण्विक रिजन से ज्यादा उत्परिवर्तन दर होती है।
5. माइक्रोसेटेसलाइट एलील का वशांनुक्रम सहप्रभावी होता है।
6. पीसीआर आधारित होने के कारण माइक्रोसेटेसलाइट मार्कर की जीनोटाइपिंग के लिए बहुत कम मात्रा में डीएनए की जरूरत होती है।

माइक्रोसैटेलाइट मार्कर द्वारा नस्ल चरित्रण एवं बहुरूपता का अध्ययन

नस्ल सरंक्षण को प्रभावी एवं सार्थक ढंग से लागू करने के लिए नस्ल चरित्रण प्राथमिक आवश्कता है। किसी आबादी, नस्ल, जाति का आनुवांशिक चरित्रण हमें आनुवांशिक विविधता के आकलन में मदद करता हैं, जो प्रजनन की रणनीति बनाने तथा आनुवांशिक संरक्षण कार्यक्रमों के क्रियान्वन के लिए बेहद जरूरी कारक है। उच्च विविधता, म्युटेशन दर की अधिकता, संख्या बहुलता, जीनोम में विस्तृत फैलाव, सह प्रभावी, वशानुक्रम एव चयन के प्रभाव से तटस्थ होने के कारण विभिन्न आण्विक मार्करों में माइक्रोसेटैलाइट मार्कर विभिन्न पशुप्रजातियों के चरित्रण के लिए सबसे अच्छा आण्विक विधि माना जाता है।

ऊँटों में मदकाल में चोटिल कोमल तालु का शल्य क्रिया द्वारा प्रबंधन

एस.घारू[1], जी.कोली[2], एच.के. जेदिया[3], पी बिश्नोई[4] एवं टी.के. गहलोत[5]

[1,2]पशु चिकित्सा अधिकारी, [3]शिक्षण सहायक, [4]सह आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, [5]आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष

[1]राजकीय पशु चिकित्सालय, पुनरासर, [2]राजकीय पशु चिकित्सालय, पुँजपुर, [3]पशु चिकित्सा विश्वविद्यालय शिक्षण एवं अनुसंधान केंद्र लूणकरनसर

[4,5]राजस्थान पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर

नर ऊँटों में सामान्यतया मदकाल (रटिंग सीज़न) अक्टूबर से फरवरी में उग्र स्वभाव युक्त होता है तथा इस मौसम में ऊँट अपने सोफ्ट पेलेट (कोमल तालु) को बार–बार बाहर निकालता है तथा उसे फुलाता है जिसे कि 'बूल्ला' या 'डूल्ला' कहते हैं। ऊँट द्वारा बार–2 गर्दन हिलाने पर ये बूल्ला/डूल्ला किसी बाहरी सामग्री जैसे कि कंटीली झाड़ियों, लोहे की किसी वस्तु या फिर अपने ही दांतों द्वारा घायल हो जाता है तथा बाहर लटक जाता है या ये घायल बूल्ला/डूल्ला फेरिंक्स (अनुग्रसनी पट्ट) में फंस जाता है। जिसके कारण ऊँट खाना–पीना छोड़ देता है। तथा इस अवस्था में यदि ऊँट की शल्य चिकित्सा नहीं की जाये तो सोफ्ट पेलेट की घायल अवस्था, इन्फेक्शन, श्वास रुकने या भूख के कारण ऊँट मर जाता है। इस अवस्था का एकमात्र इलाज शल्य चिकित्सा है।

नैदानिक परिक्षण

इस व्याधि से पीड़ित दो ऊँटों में गले के आस पास दर्द्युक्त सूजन पायी गयी तथा एक में घावयुक्त सोफ्ट पेलेट बाहर लटकी हुई देखी गई (चित्र सं. 1)। तथा ऊँट पालक द्वारा ऊँट का खान–पान का बंद होना बताया गया।

शल्य चिकित्सा प्रबंधन

सर्वप्रथम इस प्रकार के मामलों में ऊँट पालकों द्वारा नर ऊँट की हिस्ट्री ली गयी जैसे कि यह व्याधि कितने दिन पुरानी है तथा सोफ्ट पेलेट किस प्रकार चोटिल हुई है? तथा नैदानिक परीक्षण को आधार बनाकर आगे शल्य चिकित्सा का प्रबंधन किया गया। शल्य चिकित्सा के लिए बड़े ऑपरेशन थियेटर या एकांत में बड़े खुले क्षेत्र की आवश्यकता होती है तथा इस स्थान पर शोरगुल एवं मानव हस्ताक्षेप कम से कम होना चाहिए। साथ ही प्रकाश की उपलब्धता अधिकतम होनी चाहिए।

शल्य चिकित्सा पूर्व घायल नर ऊँट को रिस्ट्रेन करना

शल्य चिकित्सा पूर्व नर ऊँट को रिस्ट्रेन (काबू) किया जाता है जिसमें इसके आगे के दोनों पांवों को नीचे बैठाकर रस्सी द्वारा गर्दन के साथ तथा पीछे के दोनों पांवो को रस्सी द्वारा पीठ पर बांध दिया जाता है। इस प्रकार नर ऊँट पूर्णतया काबू में आ जाता है। शल्य क्रिया के दौरान वह बार–बार खड़ा नहीं होता है। जिससे कि चिकित्सक को कम से कम परेशानी होती है।

निश्चेतक का प्रयोग

शल्य चिकित्सा से पूर्व नर ऊँट की संपूर्ण हिस्ट्री के आधार पर जायलाजीन निश्चेतक (0.3 मिग्रा. प्रति किलो शारीरिक भार) आई.वी. रूट द्वारा दिया गया।

शल्य क्रिया

निश्चेतक देने के कुछ देर पश्चात् नर ऊँट निश्चेतन अवस्था में आ जाता है। जिन ऊँटों में सोफ्ट पेलेट अनुग्रसनी क्षेत्र में फंसा हुआ था। उन नर ऊँटों को टोर्च की रोशनी में गर्दन उठाकर मुड़े हुए कॉपर हुक की सहायता से सोफ्ट पेलेट को बाहर निकाला गया तथा घाव युक्त सोफ्ट पेलेट को सर्जिकल हरे कपड़े द्वारा (चित्र सं. 2) पकड़ा गया तथा सोफ्ट पेलेट के बिल्कुल आधार से शल्य चिकित्सक द्वारा लम्बे हैण्ड कैंची द्वारा (चित्र सं. 3) काट कर अलग (चित्र सं. 4) कर दिया गया। चूंकि ये एक रूडीमैन्ट्री अंग है जिसके

हटने पर ऊँट की शारीरिक क्रिया (फिजियोलॉजी) पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इस शल्य चिकित्सा में रक्त वाहिनियों को लाइगेशन करने की आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि इस क्षेत्र में सर्कुलर कुंडलीनुमा रक्त वाहिनियां पायी जाती है, जिसके कारण सोफ्ट पेलेट उच्छेदन होने पर स्वतः ही रक्त प्रवाह बंद हो जाता है। अब इस कटे हुए भाग को ऊँट की गर्दन नीचे करवाकर पौटेशियम परमेंगनेंट को पानी में 1:20,000 अनुपात में मिलाकर मुख गुहा को साफ किया गया, जिससे कि जमें हुए रक्त के थक्के तथा छोटी–छोटी रक्त वाहिनियों का बचा हुआ रक्त प्रवाह बंद हो सके।

औषधीय प्रबंधन

नर ऊँटों की शल्य चिकित्सा होने के पश्चात् पाँच दिनों के लिए एंटीबायोटिक के रूप में इंजेक्शन एनरोफ्लोक्सासिन 2.5 मिग्रा/किग्रा शरीर भार के अनुसार दिन में एक बार तथा दर्द निवारक इंजेक्शन मेलोक्सीकाम 3 मिग्रा/किग्रा शरीर भार अनुसार 3 दिनों तक दिया गया।

पोषण प्रबंधन

इन ऊँटों को शल्यक्रिया पश्चात् 8 से 10 दिन तक नरम आहारस्वरुप गीली हरी पत्तियां तथा गेंहू या बाजरे का आटा पानी में घोलकर दिया गया ताकि नर ऊँट की खाने की आवश्यकता पूरी हो सके। क्योंकि सूखी या कठोर चीज ऊँट के शल्य चिकित्सा किये गए स्थान पर घाव उत्पन्न कर सकती है तथा नर ऊँट का शल्य क्रिया के दौरान उच्छेदित भाग का नैदानिक घाव भर नहीं पाता है। जिससे कि द्वितीय बैक्टीरियल इन्फेक्शन हो जाएगा इस चीज से बचाव के लिए नरम आहार दिया गया जिससे कि सभी ऊँट 10–15 दिनों (चित्र सं. 5) के भीतर पूर्णतया स्वस्थ हो गए तथा सामान्य ऊँटों की भांति खान–पान करने लगे।

चित्र 1 : मदकाल में नर ऊँट में मुखगुहा से बाहर निकला हुआ घायल कोमल तालु

चित्र 2 निश्चेतक लगाने के पश्चात् शल्य चिकित्सा दौरान घायल कोमल तालु काटते हुए

चित्र 3 शल्य क्रिया के पश्चात् घायल कोमल तालु के काटने के बाद मुखगुहा

चित्र 4 शल्य क्रिया द्वारा काटकर अलग किया हुआ कोमल तालु

चित्र 5 शल्य क्रिया के 15 दिन पश्चात् मुखगुहा की स्थिति

जल की दुर्लभता एवं समस्याग्रस्त इलाकों में जल संग्रहण करने के परम्परागत तरीके

प्रियंका गौतम[1], बसंती ज्योत्सना[1], एम.के.राव[2] एवं बी.लाल[3]

[1,3]वैज्ञानिक, [2]सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी

[1,2]भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

[3]भाकृअनुप–केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान, अविकानगर

भारत में जल उपलब्धता

हमारी धरती के दो–तिहाई हिस्से के पानी से ढके होने के बावजूद पानी की कमी की बात अविश्वसनीय लगती है। कुल मिलाकर धरती पर एक अरब खरब लीटर पानी से भी अधिक है, लेकिन समस्या यह है कि इसका ज्यादातर हिस्सा नमकीन पानी का है और इंसान की प्यास बुझाने के काम नहीं आ सकता। पृथ्वी पर उपलब्ध कुल पानी का 2.6 फीसदी ही साफ पानी है, और इसका एक फीसदी पानी ही मनुष्य इस्तेमाल कर पाते हैं। वैश्विक पैमाने पर इसी पानी का 70 फीसदी कृषि में, 25 फीसदी उद्योगों में और पांच फीसदी घरेलू इस्तेमाल में निकल जाता है, भारत में ये दर क्रमशः 90, 7 और 3 है। भारत में साढ़े सात करोड़ से ज्यादा लोग पीने के साफ पानी के लिए तरस रहे हैं, नदियां प्रदूषित हैं और जल संग्रहण का ढांचा चरमराया हुआ है, ग्रामीण इलाकों मे इस्तेमाल योग्य पानी का संकट हो चुका है।

2016 में आई एक रिपोर्ट में भारत को साफ पानी के अभाव से सबसे ज्यादा ग्रस्त लोगों वाले देशों में जगह मिली थी। भारत में पानी की दुर्दशा चौंकाने वाली है, जबकि वह पानी की कमी वाला देश नहीं है, नदियां तो जो हैं सो हैं, 1194 मिलीमीटर औसत सालाना बारिश भी मिलती है। समस्या यही है कि जल संरक्षण, जल स्रोतों के प्रदूषण की रोकथाम और पानी के समुचित इस्तेमाल को लेकर न कोई संवेदनशीलता है न कारगर नीति। यूनिसेफ के मुताबिक भारत में दो तिहाई ग्रामीण जिले अत्यधिक जल ह्रास की चपेट में हैं, इन जिलों में जल स्तर पिछले 20 साल में चार मीटर गिर गया है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने जल उपयोग का प्रति व्यक्ति आदर्श मानक 100–200 लीटर निर्धारित किया है, विभिन्न देशों में यह मानक बदलते रहते हैं। लेकिन भारत की बात करें तो स्थिति बदहाल ही कही जाएगी, जहां प्रति व्यक्ति जल उपयोग करीब 80–90 लीटर प्रतिदिन है। 2050 तक इस दर के प्रति व्यक्ति 167 लीटर प्रतिदिन हो जाने का अनुमान है, अगर जल उपलब्धता की बात करें, तो सरकारी अनुमान कहता है कि 2025 तक प्रति व्यक्ति 1341 घन मीटर उपलब्ध होगा, 2050 में यह और कम होकर 1140 रह जाएगा

प्रति व्यक्ति 1000–1700 घन मीटर पानी की उपलब्धता को 'स्ट्रेस' का दर्जा दिया जाता है, अगर यह प्रति व्यक्ति 1000 घन मीटर या उससे कम हो जाए, तो पानी की कमी मान ली जाती है। भारत के हालात और वर्षाजल के औसत, भूजल के स्तर को देखते हुए माना जाता है कि 2020 तक भारत जल दबाव की स्थिति में होगा और 2025 तक पानी की कमी की चपेट में आ जायेंगे और पानी की संभावित कमी का असर, खाद्यान्न उत्पादन, बाल विकास और कुल वृद्धि के अन्य संसाधनों और उपायों पर पड़ेगा। अच्छी खासी मात्रा में बारिश होने के बावजूद भारत सिर्फ छह फीसदी वर्षा जल का ही संग्रहण कर पाता है, जबकि दुनिया के कई देशों में यह दर 250 फीसदी की है। रेनवॉटर हारवेस्टिंग को लेकर कुछ जागरूकता तो बढ़ी है, चुनिंदा आवास परियोजनाएं भी इस ओर ध्यान दे रही हैं लेकिन व्यक्तिगत स्तर पर मुस्तैदी का अभाव है, और तो छोड़िए घरों में साफ और संक्रमण रहित पानी के लिए जो आरओ सिस्टम लगे हैं, उनसे भी बहुत सा पानी बेकार चला जाता है। उस पानी का उपयोग भी संभव है लेकिन इसे लेकर आमतौर पर कोई जागरूकता नहीं है। जल का बड़े पैमाने पर दोहन घरों से लेकर उद्योगों तक, विभिन्न वजहों से किया जा रहा है।

पहाड़ों और घाटियों में निर्मित और निर्माणाधीन बड़े बांध, नदियों के जलस्तर में कमी या बदलाव, बेहिसाब खनन और खुदाई, जंगलों की आग, सूखा, अनियंत्रित बाढ़, भीषण औद्योगिकीकरण, शहरी इलाकों में अंधाधुंध निर्माण, प्लॉटों और बाजारों में बदलती खेती की जमीनें, वाहनों की बेशुमार भीड़ और बढ़ता प्रदूषण, अपार्टमेंटों, कॉलोनियों और आबादी का अत्यधिक दबाव–ये सब मानव निर्मित घटनाएं प्राकृतिक संसाधनों को चौपट कर रही हैं। पेड़–पौधे मिट रहे हैं, नदियां, तालाब, पोखर आदि विलुप्त हो रहे हैं और भूजल सूख रहा है। ग्लोबल वॉर्मिंग जैसी घटनाओं ने पहाड़ों से मैदानों तक, शहरों से गांवों तक पारिस्थितिकीय और पर्यावरणीय संतुलनों को उलटपुलट कर दिया है। अतः जल संशाधनों एवं जल को संग्रहण करना अत्यधिक आवश्यक है खासकर राजस्थान जैसे मरुस्थल प्रदेश में जहां गर्मी के दिनों में पानी दूर–दूर तक दिखाई नही देता।

राजस्थान में जल संसाधन

जल एक ऐसा प्राकृतिक संसाधन है जिस पर केवल मानव ही नहीं अपितु वनस्पति एवं सम्पूर्ण जीव जगत निर्भर है। राजस्थान जैसे राज्य के लिये जल का महत्त्व और भी अधिक हो जाता है, क्योंकि इसका आधे से अधिक भाग शुष्क एवं अर्धशुष्क है, जहाँ वार्षिक वर्षा का औसत 25 से. मी. से कम है। इस प्रदेश में सूखा और अकाल सामान्य है और प्रत्येक वर्ष कुछ–न–कुछ जिले सूखे की चपेट में आ जाते है। अनेक मरूस्थली क्षेत्रों में पेयजल उपलब्ध होने में भी कठिनाई होती है। स्वतंत्रता के पश्चात राज्य के जल संसाधनों के विकास हेतु समुचित प्रयत्न किये गये और वर्तमान में भी किये जा रहे हैं, किन्तु राज्य की प्राकृतिक परिस्थितियों, विशेषकर जलवायु की प्रतिकूलता के कारण इसमें कठिनाई आ रही है। वर्तमान में राज्य न केवल स्वयं के जल संसाधनों का उपयोग कर रहा है, अपितु पड़ौसी राज्यों से भी जल प्राप्त कर रहा है। राजस्थान में जलापूर्ति के लिये जो जल–संसाधन उपलब्ध हैं, उनमें नदियाँ, झीलें, तालाब एवं भूमिगत जल प्रमुख हैं। राजस्थान के जल संसाधनों में भू–जल महत्त्वपूर्ण है और इनका उपयोग सदियो से जल प्राप्ति में किया जाता है। यद्यपि राज्य में भू–जल की उपलब्धता सीमित है और जल स्तर भी नीचा है। राज्य में अजमेर, अलवर, भीलवाड़ा, जयपुर, उदयपुर जिलो में 50 प्रतिशत से अधिक उपलब्ध भूमि जल को उपयोग में लिया जा रहा है। दूसरी ओर जैसलमेर, बीकानेर, चूरू में जल स्तर कम हो रहा है। वर्तमान में ट्यूब वैल द्वारा गहराई से भू–जल निकाल कर सिंचाई की जा रही है। राज्य में लगभग 70 प्रतिशत सिंचाई नल एवं नलकूप से की जा रही है। केन्द्रीय भू–जल विभाग के आंकड़ो के अनुसार राज्य में 88632 लाख क्यूबिक मीटर प्रतिवर्ष भूमि जल उपलब्धता की सम्भावना है। भू–जल का एक अन्य पहलू यह है कि तीव्र गति से हो रहे शोषण के परिणाम स्वरूप जल स्तर निरन्तर नीचे गिरता जा रहा है। भू–जल उपलब्धता एवं जल स्तर के आधार पर राज्य को 595 खण्डों में विभक्त किया गया है। इसमें 206 ब्लाक चिन्ताजनक स्थिति में है तथा इनकी संख्या निरंतर अधिक होती जा रही है। उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि राजस्थान में जल संसाधन सीमित है अतः उनका संरक्षण एवं उचित उपयोग अति आवश्यक है।

राजस्थान में जल संग्रहण

राजस्थान में जल की कमी के चलते पलायन बड़े पैमाने पर देखा जाता है। प्राचीन परंपराओं से जल के सरंक्षण से यह पलायन रुकेगा और राजस्थान का सामाजिक और सांस्कृतिक ढांचा मजबूत होगा। कृषि के क्षेत्र में भी प्राचीन परंपरागत तकनीकें राजस्थान का भाग्य बदल सकती है। पानी के मामले में गरीब कहे जाने वाले राज्य राजस्थान में अब पारंपरिक और प्राचीन जल संरक्षण प्रणालियों के पुनरूद्धार की जरूरत है। राजस्थान भारत के सबसे सूखे राज्यों में से एक है और यहां सालाना 100 मिमि से भी कम वर्षा होती है। थार रेगिस्तान की इस भूमि पर गर्मियों का तापमान 48 के पार पहुंच जाता है। हजारों साल से यह रेगिस्तान यहीं था। फिर ऐसी कौन सी तकनीकें थी जिनसे यहां रहने वाले लोगों को पीने, खेत सींचने और भवन, महल, दुर्ग बनाने के लिए पर्याप्त जल मिल जाया करता था? जवाब है, सैकड़ों छोटी, मध्यम और सरल तकनीकें। जिनसे यहां के निवासी सीमित जल का बेहतर उपयोग और कुशल संरक्षण करना जानते थे। अपनी परंपराओं से कट कर हमने यह ज्ञान भी लगभग खो दिया है। इन प्राचीन जल संरक्षण तकनीकों की हमें एक बार फिर सख्त आवश्यकता है। क्योंकि हमारे पास विकल्प न के बराबर हैं। अगर हम सही प्रकार से इन प्राचीन विधियों का प्रयोग कर सके तो आने वाली पीढियों को और सूखे से जूझ रहे

तालाब

कुंआ

जोहड़

नाड़ा

रहट

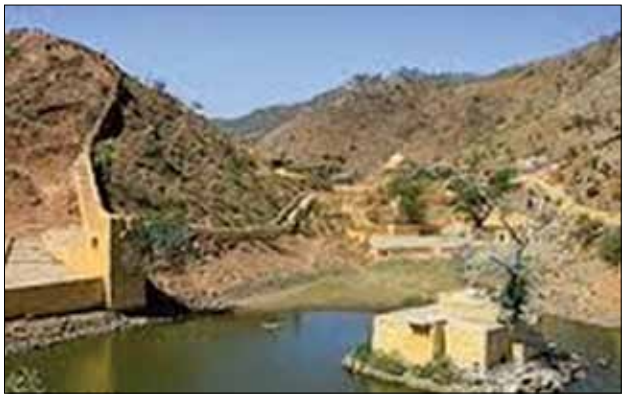

टैंक

बावड़ी

झालरा

प्रदेशवासियों के हित में कुछ अच्छा कर पाएंगे। प्राचीन समय में पानी को कुआं, तालाब, झीलों, जोहड़, पात, नाडा, बंधा, रपट, टैंक, कुंड, बावड़ी, खड़ीन, झालरा बनाकर संरक्षित किया जाता था आज हमें फिर से इन्ही विधियों के माध्यम से जल को संग्रित करने की जरूरत है ताकि आने वाली पीढ़ी को हम एक अच्छा भविष्य दे सकें। राजस्थान के विभिन्न जिलों में आज भी यह विधियां मौजूद है बीएस जरूरत है तो एक जन आन्दोलन की और एक मुहीम की जिससे की लोगों में जन चेतना जाग्रत की जा सके और जल को बचाया जा सके।

राजस्थान में जल संग्रहण करने के लिए तकनीकियाँ

राजस्थान ही नहीं पूरा विश्व इस समय जलवायु परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। ऐसे में रेतीले इलाकों में बाढ़ आना, मानसून का सूखा गुजरना, सर्दी के मौसम में वर्षा जैसे घटनाक्रम सामने आ रहे हैं। ऐसे में मौसम की अनिश्चितता भी संकेत करती है कि हमें जल संरक्षण की हमारी पारंपरिक एवं आधुनिक तकनीकों को अपनाकर नई राह का सृजन करना होगा। राजस्थान में निम्नलिखित उपयोगी विधियों को अपनाकर जल सरंक्षण एवं जल संग्रहण किया जा सकता है।

बूंद–बूंद और फव्वारा विधि अपनाना–पानी बचाने के लिये अतिआवश्यक है कि सिंचाई के लिये नवीन एवं आधुनिक तकनीक को अपनाया जाए। इसके लिये फव्वारा, तथा बूंद–बूंद सिंचाई विधियाँ सर्वोत्तम हैं। इससे 50 प्रतिशत पानी की बचत हो सकती है। इसी प्रकार खेतो में रबर के पाइप से पानी पहुंचाने पर व्यर्थ होने वाले पानी को बचाया जा सकता है। इस दिशा में सरकार पर्याप्त प्रयास कर रही है तथा इसके लिये अनुदान भी दिया जा रहा है।

भूजल का उचित उपयोग–राज्य के अनेक भागो में भूमिगत जल ही मुख्य स्त्रोत है, अतः इसका अत्यधिक दोहन न करके उचित उपयोग किया जाना चाहिए।

वन लगाकर भूमि को हरा–भरा रखना–जल चक्र को चलाने में वन बहुत सहयोगी होते है। वनों के विनाश से सूखा पड़ता है। वन वायुमण्डल में नमी बनाये रखने में सहायक होते है तथा वर्षा में सहायक होते हैं। अतः वनस्पति विनाश को रोकना जल संरक्षण हेतु आवश्यक है।

वर्षा जल का संचयन–ज्यादातर वर्षा का जल व्यर्थ चल जाता है, अतः इसका संचय आवश्यक है। इसका सबसे उत्तम उपाय है वर्षा के जल को भवनों की छत पर एकत्र कर उसे सुरक्षित रखना। सीधे जमीन के अन्दर– इसमें बरसाती पानी को एक गड्ढे के जरिये सीधे भूगर्भीय भण्डार में उतार दिया जाता है।

खाई बना कर रिचार्जिंग– बड़े संस्थानो के परिसर में बाउंड्री वाल के पास बड़ी नालियाँ बनाकर जमीन के भीतर उतारा जाता है।

कुओ में पानी उतारना– छत के पानी को पाइप द्वारा घर या पास स्थित कुएं में उतारा जाता है, इस तरीके कुआं रिचार्ज होता है तथा भूमिगत जल स्तर में सुधार होता है।

ट्यूबवेल में पानी उतारना– एक पाइप के द्वारा छत पर जमा बरसाती पानी को सीधे ट्यूबवेल में उतारा जा सकता है।

टैंक में जमा करना– छत से बरसाती पानी को सीधे किसी टैंक में जमाकर उसका उपयोग किया जा सकता है जैसा कि राजस्थान के मरूस्थली क्षेत्रों में सदियो से किया जाता रहा है।

कृषि पद्धति एवं फसल प्रतिरूप में परिवर्तन–पानी की कमी को दृष्टिगत रखते हुए राज्य में यह आवश्यक है कि शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में शुष्क कृषि अपनाई जाय। इसी प्रकार ऐसी फसलों का उत्पादन किया जाय जिन्हे कम पानी की आवश्यकता होती है।

छोटे बाँधों, तालाबों एवं एनिकट आदि का निर्माण– स्थानीय स्तर पर छोटे छोटे बाँध, कुएं एवं एनिकट बनाकर जल संग्रहण किया जा सकता है।

जल रिसाव को नियंत्रित करना–राज्य में पुरानी नहरो में जल रिसाव से पानी व्यर्थ होता है इनकी मरम्मत की जानी चाहिये। इसी प्रकार वितरिकाओ को पक्का कर तथा खेतो में पक्के नालो से पानी देने पर जल बचाया जा सकता है। यह कार्य जन सहयोग से सम्भव किया जा सकता है।

जल का समुचित प्रबन्धन – उपलब्ध जल का सर्वेक्षण, जल स्त्रोतो का उचित रख–रखाव, सिंचाई की नवीन तकनीको का उपयोग, जल दुरूपयोग पर नियंत्रण, जल प्रदूषण पर नियंत्रण, पेयजल को बचाना, जल वितरण की उचित व्यवस्था एवं जलोत्थान की तात्कालिक एवं दीर्घकालिन योजना तैयार करना, आदि मुख्य है जिनसे

संग्रहित जल को उचित तरीके से प्रबन्धन किया जा सके।

परम्परागत जल संरक्षण विधियों का प्रयोग–राजस्थान में सदियो से जल संरक्षण किया जाता रहा है। उन परम्परागत विधियो को आज भुला दिया गया है। उन्हे पुनः विकसित करके जल संरक्षण करना आवश्यक है। इसके अन्तर्गत झीलो, तालाबो एंव कुओ का उपयोग सर्व प्रचलित है। इसके अतिरिक्त राजस्थान में प्रचलित नाड़ी, बावड़ी, टोबा, खड़ीन, टांका या कुडी, कुंई आदि से जल संरक्षण परम्परागत रूप में किया जाता रहा है, इनके पुनः प्रचलन द्वारा जल संरक्षण किया जाना नितांत आवश्यक है। इस दिशा में राज्य सरकार भी वर्तमान में अत्यधिक ध्यान दे रही है।

राजस्थान के लिये जल संरक्षण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, इसके लिये राज्य सरकार भी पर्याप्त ध्यान दे रही है। सरकार के साथ जन भागीदारी भी आवश्यक है क्योंकि जल संरक्षण का सम्बन्ध प्रत्येक व्यक्ति से है और यह अभियान तभी सफल हो सकता है जब प्रत्येक व्यक्ति अपने उत्तरदायित्व को पूर्ण करे।

नोटः यह आलेख एवं प्रदर्शित चित्र अंतर्जाल के विभिन्न स्त्रोतों से संकलित किया गया है और लेखक इसकी पारदर्शिता की पुष्टि नही करता है।

"हिंदी उन सभी गुणों से अलंकृत है जिनके बल पर वह विश्व की साहित्यिक भाषाओं की अगली श्रेणी में सभासीन हो सकती है।"
- मैथिलीशरण गुप्त

थार मरुस्थल में खेजड़ी (प्रोसोपिस सिनेरेरिया) का महत्व

बी.लाल[1], आर.एल.मीणा[2], प्रियंका गौतम[3] एवं एम.के.राव[4]

[1,2,3]वैज्ञानिक, [4]सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी

[1,2]भाकृअनुप–केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान,अविकानगर

[3,4]भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

राजस्थान का सतह क्षेत्र 3,42,239 वर्ग किलोमीटर है जबकि थार 196150 वर्ग किलोमीटर तक फैला हुआ है। यह राज्य के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 60% से अधिक है। मानव आबादी 17.5 मिलियन है जिसमें से 77% ग्रामीण और 23% शहरी हैं। इस क्षेत्र में उत्पादन और जीवन समर्थन प्रणाली जैव–संबंधी और पर्यावरणीय सीमाओं से बाधित है। जैसे कि कम वार्षिक वर्षा (100–400 मिमी.) मानसून आने से पहले, बहुत अधिक तापमान (45 से 47 डिग्री तापमान) और औसतन बहुत तेज हवा और आँधियाँ जो कि 8 से 10 किलोमीटर की रफ़्तार से चलती है, जिससे की स्वेद–वाष्पोतसर्जन (वार्षिक 1500 से 2000 मिमी) बहुत अधिक होता है। यहां की मृदा रेतीली, कंकरीली एवं लवणीय होती है जिसमे पोषक तत्व भी बहुत कम होते है और करीब 58 प्रतिशत रेत के टिल्ले है जिसमे खेती करना किसानों के लिए और भी मुश्किल होता है। राजस्थान मुख्यतः एक कृषि व पशुपालन प्रधान राज्य है, अल्प व अनियमित वर्षा के बावजूद, यहाँ लगभग सभी प्रकार की फ़सलें उगाई जाती हैं। रेगिस्तानी क्षेत्र में बाजरा, कोटा में ज्वार व उदयपुर में मुख्यतः मक्का उगाई जाती हैं। राज्य में गेहूँ व जौ का विस्तार अच्छा–ख़ासा (रेगिस्तानी क्षेत्रों को छोड़कर है। ऐसा ही दलहन (मूंग, मोठ, चना, मटर, सेम व मसूर जैसी खाद्य फलियाँ), गन्ना व तिलहन के साथ भी है। चावल की उन्नत किस्मों को भी यहाँ उगाया जाने लगा है। चंबल घाटी' और 'इंदिरा गांधी नहर परियोजनाओं' के क्षेत्रों में इस फ़सल के कुल क्षेत्रफल में बढ़ोतरी हुई है।

सारणी 1 राजस्थान के थार रेगिस्तान में भूमि के उपयोग की पद्धति

वर्ग	कृषेतर X 10^3	कुल का प्रतिशत
जंगल	240	1.3
गैर–कृषि बंजर भूमि	1584	8.4
गैर–खेती, रेंज और अन्य चराई भूमि	5844	31.2
परती भूमि	2949	15.7
नेट बोया क्षेत्र	8182	43.5
कुल रिपोर्टेड भूमि उपयोग	18749	95.6
राजस्थान की कुल शुष्क भूमि	19615	100.0

थार मरुस्थल में पशुपालन का किसानों की आय बढ़ाने में महत्व

राजस्थान की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से कृषि कार्यों एव पशुपालन पर ही निर्भर करती है, तथा कृषि के उपरान्त पशुपालन को ही जीविका का प्रमुख साधन माना जा सकता है। राजस्थान में प्रायः सूखे की समस्या रहती है। इसी वजह से पशुओं को पर्याप्त मात्रा में चारा उपलब्ध नहीं हो पाता। राज्य के मरुस्थलीय और पर्वतीय क्षेत्रों में भौगोलिक और प्राकृतिक परिस्थितियों का सामना करने के लिये एकमात्र विकल्प पशुपालन व्यवसाय ही रह जाता है। राज्य में जहाँ एक ओर वर्षाभाव के कारण कृषि से जीविकोपार्जन करना कठिन होता है, वहीं दूसरी ओर औद्योगिक रोजगार के अवसर भी नगण्य हैं। ऐसी स्थिति में ग्रामीण लोगों ने पशुपालन को ही जीवन शैली के रूप में अपना रखा है। पशुपालन व्यवसाय से राज्य की अर्थव्यवस्था अनेक प्रकार के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष घटकों से लाभान्वित होती है। पशुपालन देश के ग्रामीण क्षेत्रों में एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण आर्थिक गतिविधि है जिससे कृषि पर निर्भर परिवारों को अनुपूरक आय प्राप्त होती है। हाँलाकि यहाँ का अधिकांश क्षेत्र शुष्क या अर्द्ध शुष्क है, फिर भी राजस्थान में बड़ी संख्या में पालतू पशु हैं व राजस्थान सर्वाधिक ऊन का उत्पादन करने वाला राज्य है। ऊँटों व शुष्क इलाकों के पशुओं की विभिन्न नस्लों पर राजस्थान का एकाधिकार है। राजस्थान में पशु–सम्पदा का विषेश रूप से आर्थिक

महत्व माना गया है। राज्य के कुल क्षेत्रफल का 61 प्रतिशत मरुस्थलीय प्रदेश है, जहाँ जीविकोपार्जन का मुख्य साधन पशुपालन ही है। इससे राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति का महत्त्वपूर्ण अंश प्राप्त होता है। राजस्थान में देश के पशुधन का 7 प्रतिशत है, जिसमें भेड़ों का 25 प्रतिशत अंश पाया जाता है। पशु सम्पदा की दृष्टि से राजस्थान एक समृद्ध राज्य है। यहाँ भारत के कुल पशुधन का लगभग 11.5 प्रतिशत मौजूद है। क्षेत्रफल की दृष्टि से पशुओं का औसत घनत्व 120 पशु प्रति वर्ग किलोमीटर है जो सम्पूर्ण भारत के औसत घनत्व (112 पशु प्रति वर्ग किलोमीटर) से अधिक है। पशुओं की बढ़ती हुई संख्या अकाल और सूखे से पीड़ित राजस्थान के लिये वरदान सिद्ध हो रही है। आज राज्य की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति का लगभग 15 प्रतिशत भाग पशु सम्पदा से ही प्राप्त हो रहा है। राजस्थान में देश के कुल दुग्ध उत्पादन का अंश लगभग 10 प्रतिशत होता है।राज्य के पशुओं द्वारा भार–वहन शक्ति 35 प्रतिशत है। भेड़ के मॉस में राजस्थान का भारत में अंश 30 प्रतिशत है। ऊन में राजस्थान का भारत में अंश 40 प्रतिशत है। राज्य में भेंड़ों की संख्या समस्त भारत की संख्या का लगभग 25 प्रतिशत है।

थार मरुस्थल की जीवन रेखा खेजड़ी का किसानों की आय बढ़ाने में महती भूमिका

भारतीय संस्कृति में पेड़–पौधों का बेहद खास महत्व है। कोई इसे पर्यावरण की दृष्टि से महत्व देता है तो कोई अपने धार्मिक आस्थाओं के कारण। ऐसे ही कुछ पेड़ों में से एक है शमी का पेड़ जिसे खेजड़ी का पेड़ भी कहा जाता है। खेजड़ी या शमी एक वृक्ष है जो थार के मरुस्थल एवं अन्य स्थानों में पाया जाता है। यहां के लोगों के लिए खेजड़ी का वृक्ष बहुत उपयोगी है। इसके अन्य नामों में घफ़ (संयुक्त अरब अमीरात), खेजड़ी, जांट/जांटी, सांगरी (राजस्थान), जंड (पंजाबी), कांडी (सिंध), वण्णि (तमिल), शमी, सुमरी (गुजराती) आते हैं। इसका व्यापारिक नाम कांडी है। यह वृक्ष विभिन्न देशों में पाया जाता है जहाँ इसके अलग अलग नाम हैं। अंग्रेजी में यह प्रोसोपिस सिनेरेरिया नाम से जाना जाता है। खेजड़ी का धार्मिक कार्यों में भी विशेष महत्व है। इसके सूखे छिलके को यज्ञ में काम में लिया जाता है। इसके अलावा हर धार्मिक कार्य में खेजड़ी की प्रमुखता बनी रहती है। रेगिस्तान में जब खाने को कुछ नहीं होता, तब खेजड़ी चारा देती है, जो 'लूंख' कहलाती है। इसके फूल को 'मींझर' व फल को 'सांगरी' कहते हैं। ज्येष्ठ के माह में यह पेड़ हरा भरा रहता है। गर्मी के मौसम में जानवर राहत पाने के लिए इसी पेड़ के नीचे आते है। इस पेड़ से बने चारे को लूंख कहते है जबकि इसका फूल मींझर कहलाता है। इसके फल को सांगरी कहते हैं यह फल सूखने के बाद खोखा बन जाता है जो एक सूखा मेवा है। इस पेड़ की लकड़ी मजबूत होती है जो किसानों के लिए जलाने और फर्नीचर बनाने के काम आती है। इसकी जड़ से हल बनाया जाता है।

खेजड़ी शुष्क और अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में पाया जाने वाला बहुउपयोगी वृक्ष है। यह लेग्यूमिनेसी कुल का फलीदार पेड़ है। इसकी पत्तियां उच्च कोटि के चारे के लिए प्रख्यात है। खेजड़ी की पत्तियों का चारा बकरी, ऊँट और दूसरे पशु बड़े चाव से खाते है। इसके कच्ची फलियों (सांगरी) की बाजार में खासी मांग रहती है। बाजार में सांगरी 500–600 रूपये प्रतिकिलो के भाव से मिलती है। लेग्यूमिनेसी कुल को पेड़ होने के कारण यह वायुमंडल से नत्रजन स्थिरीकरण भी करता है। खेजड़ी के पेड़ो में सूखारोधी के अलावा सर्दियों में पडने वाले पाले और उच्च तापमान सहन करने की असीम क्षमता है। इन विशेषताओं को देखते हुए वर्षा आधारित खेती करने वाले किसानों के लिए खेजड़ी का उत्पादन सोने पर सुहागा साबित हो सकता है। हरे चारे का उत्पादन लगभग 59 किलोग्राम प्रति वृक्ष प्राप्त किया जा सकता है। खेजडी के बारे में एक बहुत पुरानी कहावत है कि जिस किसान के पास एक पेड़ खेजड़ी, एक बकरी और एक ऊँट हो वह अकाल में भी जीवनयापन कर सकता है। अकाल के समय रेगिस्तान के आदमी और जानवरों का यही एक मात्र सहारा है। सन 1899 में दुर्भिक्ष अकाल पड़ा था जिसको छपनिया अकाल कहते हैं, उस समय रेगिस्तान के लोग इस पेड़ के तनों के छिलके खाकर जिन्दा रहे थे। इस पेड़ के नीचे अनाज की पैदावार ज्यादा होती है।

लूंख और सांगरी का पौषकीय महत्व

खेजड़ी से मिलने वाली लूंज में 14–18 प्रतिशत क्रूड प्रोटीन, 15–20 प्रतिशत रेशा और 8 प्रतिशत खनिज लवण पाये जाते है। खनिज लवण में कैल्शियम और फॉस्फोरस की अधिकता होती है। कच्ची सांगरी में औसतन 8 प्रतिशत प्रोटीन, 28 प्रतिशत रेशा, 2 प्रतिशत वसा, 0.4 प्रतिशत

कैल्शियम और 0.2 प्रतिशत आयरन तत्व पाया जाता है। बात करे पक्की फलियों में मौजूद पोषक तत्व की तो 8–15 प्रतिशत प्रोटीन, 40–50 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 15 प्रतिशत शर्करा और 9–21 प्रतिशत रेशा होता है।

सारणी 2 खेजड़ी की पत्तियों एवं फलों में पोषक तत्वों की मात्रा

पोषक तत्व	पत्तियाँ (%)	फल (%)
क्रूड प्रोटीन	11.9	18.0
क्रूड रेशे	17.5	26.0
ईथर सार	2.9	-
कार्बोहाइड्रेट	-	56.0
वसा	-	2.0
नत्रजन मुक्त सार	43.5	-
राख	8.1	-
फॉस्फोरस	0.4	0.4
कैल्शियम	2.1	0.4
लोहा	-	0.2

खान और उनके सहयोगी (2006)

खेजड़ी आधारित कृषि प्रणाली से फसलों की उत्पादकता पर प्रभाव

जनसंख्या वृद्धि के कारण प्राकृतिक संसाधनो का अत्यधिक रूप से दोहन हुआ है जिससे हमारे पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी संतुलन पर भी विपरीत प्रभाव पड़ा है, अतः इक्कीसवीं सदी में हमें बढ़ती हुई जनसँख्या के लिए भोजन, रेशा, ईंधन की आपूर्ति एवं घर बनाने के लिए लकड़ी की आवश्यकता पूर्ति करने के लिए मिश्रित कृषि प्रणाली की जरूरत है। जिसमे पेड़ों के साथ साथ साथ फसल उत्पादन को भी कम संसाधनों से लिया जा सके इसके अलावा लेगुमिनोसी वंश के वृक्षों के नीचे फसल उत्पादकता में भी वृद्धि होती है, क्योंकि ये वृक्ष वातावरण की नत्रजन को मृदा में स्थिरीकरण कर भूमि की उर्वरता बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं और ये वृक्ष शुष्क क्षेत्रों में अधिक तापमान से पानी का भूमि की सतह से एवं वाष्पोतसर्जन से भाप बन कर उड़ने वाले पानी को भी रोकने में सहायक होते है। अनुसंधान कर्ताओं ने यह सिद्ध किया किया है कि खेजड़ी के साथ चारा, दलहन एवं तिलहन फसलों को लगाने से उत्पादकता में वृद्धि होती है जिससे कि किसानों को पशुओं के लिए चारा और मनुष्यों के लिए अधिक फसल का उत्पादन मिलता है, इसके साथ साथ रेगिस्तान में मरुस्थल के विस्तार को रोकने में भी अहम भूमिका अदा करते हैं।

खेजड़ी आधारित कृषि प्रणाली में वृक्षों के बीच एकवर्षीय फसलों की उत्पादकता अकेले उगाने वाली फसलों की तुलना में अधिक प्राप्त हुई (सारणी 2)। वृक्ष और फसल के बीच नमी और सूर्य के प्रकाश के लिए कम प्रतिस्पर्धा हुई इसके अलावा खेजड़ी की जड़ें जमीन में बहुत गहराई में जाती है, जिससे कि मृदा की नमी में भी सुधार होता है और खेजड़ी वृक्षों की भी एकवर्षीय फसलों पर सही प्रभाव देखा गया जो की अधिक उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुआ। खेजड़ी आधारित कृषि प्रणाली में अनाज एवं चारे का अधिक उत्पादन होने से मुनाफा भी अधिक हुआ क्योंकि इसमें एकवर्षीय फसलों के साथ–साथ खेजड़ी से भी फल और चारे की आपूर्ति होने से उत्पादकता

सारणी 3. खेजड़ी के साथ और अकेले उगाये जाने वाली विभिन्न फसलों के हरे एवं सूखे चारे की उत्पादकता (टन प्रति हेक्टेयर) पर प्रभाव

फसल क्रम	हरे चारे की उत्पादकता (टन प्रति हे.)		सूखे चारे की उत्पादकता (टन प्रति हे.)	
खेजड़ी के साथ	**खरीफ**	**रबी**	**खरीफ**	**रबी**
लोबिया–टोडीया	11.33	20.59	3.83	9.10
बाजरा–टोडीया	14.85	19.49	4.99	8.17
ग्वार–टोडीया	7.31	19.76	2.49	8.71
बुफ्फेल घास–बुफ्फेल घास	6.08	-	2.39	-
खेजड़ी के बिना				
लोबिया–टोडीया	9.12	18.78	3.05	8.52
बाजरा–टोडीया	11.82	16.39	4.00	7.35
ग्वार–टोडीया	6.20	17.80	2.03	8.04
बुफ्फेल घास–बुफ्फेल घास	6.54	-	2.36	-

(कौशिक और कुमार 2002)

सारणी 4. खेजड़ी के साथ और अकेले उगाये जाने वाली विभिन्न फसलों का अर्थशास्त्र

फसल क्रम	खेती की लागत	कुल आय	शुद्ध आय	लाभ : लागत अनुपात
खेजड़ी के साथ	**खरीफ**	**रबी**	**खरीफ**	**रबी**
लोबिया–टोडीया	5641	20046	14905	3.55
बाजरा–टोडीया	6675	20772	15197	3.73
ग्वार–टोडीया	5795	18591	12796	3.21
बुफ्फेल घास–बुफ्फेल घास	6303	12276	5973	1.95
खेजड़ी के बिना				
लोबिया–टोडीया	3976	8370	4399	2.10
बाजरा–टोडीया	3910	8463	4553	2.16
ग्वार–टोडीया	4130	7200	3070	1.74
बुफ्फेल घास–बुफ्फेल घास	4638	1962	2676	0.42

(कौशिक और कुमार 2002)

सारणी 5. खेजड़ी के साथ और खेजड़ी के बिना अंतः कृषि प्रणाली में मूंग और बाजरा की पैदावार पर प्रभाव

खेजड़ी	मूंग (किग्रा प्रति है.)		बाजरा (किग्रा प्रति है.)	
वृक्ष घनत्व (पेड़ प्रति है.)	**दाना**	**भूसा**	**दाना**	**भूसा**
417	153	1666	133	4330
278	162	1699	141	4430
208	193	1803	158	5420
खेजड़ी के बिना	180	1720	165	5470

(तिवारी और सिंह 2006)

बढ़ी जिससे कि अतिरिक्त लाभ हुआ (सारणी 3)।

खेजड़ी वृक्ष का वृक्ष घनत्व (पेड़ प्रति है.) से भी फसलों की उत्पादकता पर प्रभाव पड़ता है, इसलिए हमें खेजड़ी को एक निश्चित अनुपात में लगाना चाहिए ताकि इसके साथ में लगाने वाली एकवर्षीय फसलों की उतापदकता पर गलत प्रभाव ना हों। एक शोध में यह दर्शाया गया है कि खेजड़ी के 208 वृक्ष प्रति हेक्टेयर में लगाने से मूंग फसल की उत्पादकता में वृद्धि होती है (सारणी 5)। फसलों की उत्पादकता के साथ–साथ खेजड़ी का मृदा की उर्वरता पर भी प्रभाव पड़ता है। एक शोध में यह निष्कर्ष निकाला गया है कि अगर हम बिना खेजड़ी के फसल उगाते है तों मृदा के उर्वरा स्टोर में कमी आती है वही अगर खेजड़ी के साथ फसल लगाई जाती है तों मृदा में प्राथमिक और सूक्ष्म तत्वों की मात्रा में वृद्धि होती है (सारणी 6)। जिससे खेत की उर्वरता भी बनी रहती है और मरुस्थलीकरण को रोकने में भी मदद मिलती है। अतः किसानों को हमेशा खेजड़ी के साथ उपयुक्त फसलों का चुनाव करके लगाना चाहिए ताकि आय बढ सकें।

जैसे जैसे खेजड़ी वृक्ष से दूर जाते हैं, वैसे वैसे फसल की उत्पादकता पर प्रभाव पड़ता है, खेजड़ी वृक्ष के नीचे, पौधों की संख्या, पौधों की ऊंचाई, पौधे प्रति पौधे और फली की लंबाई अधिक होती है, क्योंकि खेजड़ी दलहन वाली फसलों के साथ नमी और प्रकाश के लिए प्रतियोगिता नही होती है, एकवर्षीय फसलें उपरी सतह से नमी और पोषक तत्व ग्रहण करती है, वही खेजड़ी निचली सतह से पोषक तत्व और नमी लेती है जिससे फसलों के साथ प्रतियोगिता नहीं होती और दोनों को एक साथ आसानी से लिया जा सकता है खेजड़ी गर्म शुष्क वातावरण में छाया के साथ मिट्टी की उर्वरता बढ़ता है और छाया से सकारात्मक प्रभाव होता है।

मृदा में बहुत प्रकार के सूक्ष्म जीव पाए जाते है जो कि मिटटी की उर्वर शक्ति को प्रभावित करते हैं, शोधकर्ताओं के अनुसार खेजड़ी एक ऐसा वृक्ष है जिसको खेत में लगाने से मृदा में पाए जाने वाले लाभदायक सूक्ष्म जीवों की संख्या में वृद्धि होती है (सारणी 7), जिससे खेत की उर्वरता शक्ति और उत्पादकता बढ़ती है। अतः हम यह कह सकते हैं

सारणी 6 प्राथमिक और सूक्ष्म मृदा में उपलब्धता पर खेजड़ी का प्रभाव

	गहराई (सेमी)	N	P	K	Zn	Mn	Cu	Fe
		(किग्रा प्रति है.)			पीपीएम			
खेजड़ी के साथ	0-15	250	22.4	633	0.60	10.0	0.50	3.3
	15-30	193	10.0	325	2.28	11.7	1.28	2.4
बिना खेजड़ी के	0-15	203	7.7	370	0.20	6.9	0.26	3.0
	15-30	196	4.0	235	0.08	8.1	0.50	4.0

(तिवारी और सिंह 2006)

सारणी 7 विभिन्न वृक्षों के नीचे मृदा में पाए सूक्ष्म जीवों की संख्या पर प्रभाव

	जीवाणु (N x 105)	फंफूद (N x 105)	एक्टीनोमाईसीटीज (N x 105)	नत्रजन जीवाणु (MPN)
प्रोसोपिस सिनेरेरीआ	32	29	16	1100
शीशम	22	18	11	1300
टेकमेला उन्दुलाता	25	20	12	900
प्रोसोपिस जूलीफ्लोरा	20	16	10	700

(तिवारी और सिंह 2006)

खेजड़ी मरुस्थल में रहने वाले लोगों के लिए एक वरदान है जिसको लगाकर किसान अपनी आय बढ़ा सकते है और आसानी से पशुपालन भी कर सकते है।

उपरोक्त सभी अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि खेजड़ी अपने आसपास की फसलों को उपयुक्त पारिस्थितिकीय स्थितियां प्रदान करती है जिससे शुष्क क्षेत्रों में होने वाली फसलों की वृद्धि और उत्पादकता पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

क्योंकि खेजड़ी से फसलों में फल्लियों की संख्या, चारे वाली फसलों में कल्लों की संख्या में बधवार होती है, इसके अलावा इस वृक्ष से ग्रामीण को विभिन्न उपयोगी उत्पाद प्राप्त होते हैं इसलिए शुष्क क्षेत्रों में टिकाऊ खेती करने के लिए, इस बहुउद्देशीय वृक्ष प्रजाति को कृषि–वानिकी प्रथाओं में संरक्षित और बढ़ावा दिया जाना चाहिए और ज्यादा से ज्यादा संख्या में लगाना चाहिए ताकि फसलों की उत्पादकता के साथ साथ मरुस्थल के प्रसार को रोकने में भी मदद मिल सके। अतः थर मरुस्थल में किसान और पशुपालक खेजड़ी को लगाकर दलहन फसलों में उत्पादकता वृद्धि के साथ–साथ चारे का भी उत्पादन ले सकते हैं जिससे कि यहाँ के किसानो की आय बढाने में खेजड़ी एक महती भूमिका अदा कर सकता है।

नोटः यह आलेख एवं प्रदर्शित सारणी अंतजलि के विभिन्न स्त्रोतों से संकलित किया गया है और लेखक इसकी पारदर्शिता की पुष्टि नही करता है।

"हिंदी भाषा अपनी अनेक धाराओं के साथ
प्रशस्त क्षेत्र में प्रखर गति से प्रकाशित हो रही है।"
- छविनाथ पांडेय

अजोला : पौष्टिक पशु आहार

योगेश आर्य[1], उमेश कुमार प्रजापत[2], निर्मला सैनी[3] एच.के.नरूला[3] एवं दिनेश जैन[4]

[1]स्नातकोत्तर अध्येता, [2]शोधार्थी, [3]प्रधान वैज्ञानिक, [4]सहायक आचार्य

[1,2,3]केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय परिसर, बीकानेर

[4]राजस्थान पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर

राजस्थान राज्य की जी.डी.पी. में पशुधन सम्पदा का 11% योगदान है, परन्तु राज्य के पशुधन में कुपोषण के कारण पशु स्वास्थ्य और दुग्ध उत्पादन की क्षमता गिरती जा रही है। कृषि एवं पशुचिकित्सा वैज्ञानिक लगातार इसी दिशा में कार्य कर हरे चारे के ऐसे विकल्पों की खोज कर रहे हैं जो कम लागत में अधिक पौष्टिक, उच्च गुणवत्ता युक्त, संतुलित आहार हो। युवा पशुपालकों को अत्याधुनिक वैज्ञानिक तकनीकों, नवीन अनुसंधानों के प्रयोग से अधिक दुध उत्पादन हेतु प्रेरित किया जा रहा है।

पशु आहार के विकल्प की खोज में एक विस्मयकारी फर्न अजोला सदाबहार चारे के रूप में उपयोगी हो सकता है। पशुपालन में चारे–दाने में आने वाली लागत को कम करने में अजोला की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। अजोला का उत्पादन एक बहुत ही सरल, सस्ती एवं लाभदायक तकनीक है, जिसमें कम लागत तथा थोड़ी सी मेहनत से पौष्टिक तत्वों से भरपूर चारा उत्पादन किया जा सकता है, तथा व्यवसायिक उत्पादन कर मुर्गी एवं अन्य पशुओं के आहार के रूप में अजोला बहुत ही उपयोगी साबित होता है।

अजोला : एक परिचय

अजोला जल की सतह पर तैरने वाली एक जलीय फर्न है। इसकी पंखुडियों में नील हरित शैवाल (एनाबिना अजोली) सहजैविक के रूप में पाई जाती है जो वायुमंडलीय नत्रजन का योगिकीकरण करती है। अजोला शैवाल की वृदि के लिए आवश्यक कार्बन स्रोत एवं वातावरण प्रदान करता है तथा शैवाल वातावरण से नत्रजन स्थायीकरण के लिए उतरदायी रहता है। प्राकृतिक रूप से यह उष्ण एवं गर्म उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में पाया जाता है।

अजोला प्रोटीन, आवश्यक एमिनो एसिड, विटामिन्स, विकासवर्धक सहायक तत्वों तथा कैल्सियम, फॉस्फोरस, पोटैसियम, फेरस, कॉपर, मैग्निसियम से भरपूर होता है। शुष्क वजन के आधार पर इसमें 25 से 30% प्रोटीन, 10 से 15% खनिज, 7 से 10% एमिनो–अम्ल, जैव सक्रीय पदार्थ एवं बायो पॉलीमर होते हैं। अजोला दुग्ध उत्पादक पशुओं एवं मुर्गियों के लिए प्रोटीन का अच्छा स्रोत हो सकता है।

अजोला चारा खिलाने से पशुओं में होने वाले लाभ

अजोला सस्ता, सुपाच्य एवं पौष्टिक पूरक पशु आहार है। इसे खिलाने से वसा व वसारहित पदार्थ की मात्रा, सामान्य आहार खाने वाले पशुओं के दूध से अजोला खाने वाले पशुओं के दूध में अधिक पाई जाती है। यह पशुओं में बाँझपन निवारण में भी उपयोगी हैं। पशुओ के पेशाब में खून की समस्या फॉस्फोरस की कमी से होती है जो पशुओं को अजोला खिलाने से दूर हो जाती हैं। अजोला से पशुओं में कैल्शियम, फॉस्फोरस, लोहे की आवश्यकता की पूर्ति होती है, जिससे पशुओ का शारीरिक विकास अच्छा होता है। अजोला की कई प्रजातिया पाई जाती है, परन्तु भारत में अजोला–पिनाटा प्रजाति प्रमुखता से मिलती है। अजोला में रिजका व नेपिएर ग्रास की तुलना में 5 गुना अधिक प्रोटीन (20–25%) मिलती है। अजोला की यह विशेषता है कि यह अनुकूल वातावरणीय परिस्थतियों में 5 दिनों में ही 2 गुना हो जाता है। यदि इस से पूरे वर्ष उत्पादन लिया जाये तो 300 टन से भी अधिक अजोला प्रति हेक्टेयर पैदा किया जा सकता है। अजोला गाय, भैस, भेड़, बकरियों, मुर्गी के लिए एक आदर्श हरा चारा है। अजोला अन्य चारो से अधिक पौष्टिक होता है। दुधारू पशुओ को प्रतिदिन 2 से 2.5 किलो ताजा अजोला बांटे के साथ खिलाने से 15% तक दूध उत्पादन में वृद्धि होती है। मुर्गियों को 10–15 ग्राम अजोला प्रतिदिन खिलाने से उनके शारीरिक भार व अंडा उत्पादन क्षमता में 10–15% तक की वृदि होती है।

भेड़ व बकरियों को 100–200 ग्राम ताजा अजोला खिलाने से शारीरिक वृद्धि के साथ दूध उत्पादन में भी वृद्धि देखी गयी है।

अजोला उत्पादन की विधि

अजोला की उत्पादन लागत प्रति एक किलो पर एक रुपये से कम आती है, इसलिए किसानों व पशुपालकों के बीच में तेजी से लोकप्रिय हो रहा है और यही कारण है कि दक्षिण से शुरू हुई अजोला की खेती का कारवाँ अब पूरे भारत में फैलता जा रहा है। अजोला की खेती किसान अपने आस पास खाली पड़ी जमीनों के अलावा अपने घरों की छतो पर भी इसका उत्पादन सरलता एवं सुगमता से प्राप्त कर सकते हैं।

भूमि का चयन

पशुपालक अपने आस पास अनुपयोगी पड़ी भूमि में अजोला का उत्पादन कर सकता है। भूमि का चयन करते वक्त यह ध्यान रखना चाहिए कि क्यारिया बनानी हैं वहा की भूमि का स्तर ऊँचा होना चाहिए ताकि वर्षा या अन्य किसी प्रकार का गन्दा जल क्यारियों में ना आ सके अजोला की क्यारियां जल स्रोत के आस पास होनी चाहिए जिससे क्यारियों में सरलता से पानी दिया जा सके।

क्यारियाँ बनाने की पद्धति

3 फीट चोडी 10 फीट लम्बी व 1 फीट गहरी आकार की कच्ची क्यारिया तैयार करके उस पर पॉलिथीन शीट को एक समान इस तरह से फैलाया जाये जिससे कि क्यारी की परिधि अनुसार आयताकार आकार के किनारे पूरी तरह से ढक जाये। इन क्यारियों में दस किलो छन्नी हुयी मिटटी व दो किलोग्राम गोबर खाद को मिलकर प्रति क्यारी में बिछा देना चाहिए। और इन क्यारियों में पानी भर देना चाहिए। सीमेंट की टंकी में भी अजोला उगाया जा सकता है। उस टंकी में प्लास्टिक शीट बिछाने की आवश्यकता नही रहती सिर्फ छाया करने के लिए शेड नेट की जरुरत पड़ती है। आजकल बाजार में 12 ल. 6 चो. 1 ग. फीट की उच्च घनत्व पालीएथीलीन अजोला उत्पादन बेड भी उपलब्ध है।

अजोला का क्यारियों में स्थानांतरण

0.5–1 किलो शुद्ध अजोला कल्चर पानी पर एक समान फैला देना चाहिए। अजोला बीज फैलाने के तुरंत बाद अजोला के पोधो को सीधा करने के लिए अजोला पर ताजा पानी का छिड़काव करना चाहिए। एक सप्ताह के अन्दर अजोला पूरी क्यारी में फैल जाता है एवं एक मोटी चादर जैसी बन जाती है। अजोला की तेज वृद्धि तथा 200 ग्राम प्रति वर्गमीटर दैनिक पैदावार के लिए 5 दिनों में एक बार लगभग 1 किलो गोबर और 20 ग्राम सिंगल सुपर फोस्फेट मिलाया जाना चाहिए। अजोला बहुत तेजी से बढ़ता है और 10–15 दिन के अन्तराल में पूरे गड्ढे को ढक लेता है।

अजोला उत्पादन के दौरान बरती जाने वाली सावधानियाँ

1) अजोला की तेज बढवार और उत्पादन के लिए इससे प्रतिदिन उपयोग हेतु लगभग 200 ग्राम प्रतिवर्ग मीटर की दर से बाहर निकाला जाना आवश्यक है।
2) अजोला तैयार करने के लिए अधिकतम 30 डिग्री तापमान उपयुक्त माना जाता है तथा इसे तेयार करने वाला स्थान छायादार होना चाहिए।
3) समय समय पर गड़े में गोबर व सिंगल सुपर फोस्फेट डालते रहे जिससे अजोला फ़र्न तीव्र गति से विकसित होता रहे।
4) प्रतिमाह एक बार अजोला तैयार करने वाले गड्ढे या टंकी की लगभग 5 किलो मिटटी को ताजा मिटटी से बदलें जिससे नत्रजन की अधिकता या अन्य खनिजों की कमी होने से बचाया जा सके।
5) अजोला तैयार करने की टंकी के पानी के पी.एच.

का मान समय समय पर परिक्षण करते रहे इसका पी. एच. मान 5.5–7.0 के मध्य होना उत्तम रहता है।

6) प्रति दस दिनों के अन्तराल से एक बार अजोला तैयार करने की टंकी या गड्ढे से 25–30% पानी ताजे पानी से बदल देना चाहिए, जिससे नाइट्रोजन की अधिकता से बचाया जा सके।

7) प्रत्येक 3 महीनों के अन्तराल में एक बार क्यारी को साफ किया जाना चाहिए, पानी तथा मिटटी को बदला जाना चाहिये एवं नये अजोला बीज का उपयोग किया जाना चाहिए।

8) अजोला को क्यारी से निकालने के लिए छलनी का उपयोग करना चाहिए व छलनी में साफ पानी से धो लेना चाहिए ताकि छोटे छोटे पौधे जो की छलनी में चिपके रहते है उनको वापस क्यारी में डाला जा सके।

9) प्रकाश की तीव्रता कम करने के लिए छाया करने वाली जाली का उपयोग करना चाहिए।

10) अजोला की क्यारी में बायोमास अधिक मात्रा में एकत्र होने से रोकने के लिए अजोला को प्रतिदिन क्यारी से हटाना चाहिए।

"देवनागरी ध्वनिशास्त्र की दृष्टि से
अत्यंत वैज्ञानिक लिपि है।"
- रविशंकर शुक्ल

खींप संरक्षण आधारित कार्बन खेती से थार मरुस्थल में कार्बन-डाई ऑक्साइड गैस उत्सर्जन में कमी की संभावनाएँ

अमित कुमार व्यास[1] एवं रामेश्वर लाल व्यास[2]

[1]होम्योपैथिक फिजीशियन, [2]तकनीकी अधिकारी

[1]एस.जी.सी.होम्यो क्लिनिक एवं रिसर्च सेन्टर,बीकानेर

[2]भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

पृथ्वी के तापमान में निरंतर हो रही तापवृद्धि का मुख्य कारण, मानवजन्य क्रियाकलापों से अधिक मात्रा में उत्पन्न होने वाली कार्बन–डाई ऑक्साइड गैसों (ग्रीन हाउस गैसों) का वायुमंडल में उत्सर्जन होना है। तापमान की इस वृद्धि से पृथ्वी पर जलवायु परिवर्तन के दुष्परिणाम स्पष्ट नजर आने लगे हैं और प्राकृतिक आपदाओं की आवृति और प्रभावित क्षेत्रों का व्यापक विस्तार हो रहा है, फलस्वरुप मानव जाति के अस्तित्व के लिए आवश्यक जैविक विविधता भी घट रही है। इसीलिए यह आवश्यक हो गया है कि वायुमंडल में कार्बन–डाई ऑक्साइड उत्सर्जन की मात्रा कम की जाए, जिससे जलवायु परिवर्तनों के नकारात्मक प्रभावों का निराकरण हों एवं जैविक विविधता संरक्षण हो तथा हमारी भावी पीढ़ियां सुरक्षित रह सकें।

प्रकृति प्रदत पेड़–पौधों में कार्बन–डाई ऑक्साइड अवशोषण व उसके समायोजन की अद्‌भुत क्षमता होती है, इसीलिए ही पेड़–पौधें ग्रीन हाउस गैस प्रभाव को रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। थार मरुस्थल की शुष्क व कृषि अयोग्य भूमि के वृहत क्षेत्रों के स्थानीय प्रजातियों के संरक्षण एवं पौधारोपण पर आधारित कार्बन–डाई ऑक्साइड गैस उत्सर्जन में कमी करने की पर्यावरण अनुकूल सस्ती व व्यावहारिक विधि सफल सिद्ध हो सकती है। वर्तमान में जर्मन वैज्ञानिको द्वारा इसी आधार पर अरब के रेगिस्तानी क्षेत्र मे कृषि के लिए अयोग्य भूमि में 10,000 हेक्टेयर के विशाल क्षेत्र में जेट्रोफा कुरकस की खेती–जिसें कार्बन खेती कहा गया है, से प्रतिवर्ष 25 टन कार्बन–डाई ऑक्साइड अधिग्रहण से लगातार 20 वर्ष ग्रीन हाउस गैस प्रभाव को कम करनें की कम्प्यूटर आधारित काल्पनिक परियोजना प्रस्तुत की गयी है। छोटे स्तर के सफल परिणामों से वैज्ञानिक काफी आशावादी है और इसको व्यापक क्षेत्रों में बढ़ाना प्रस्तावित है।

पारिस्थितिकी तंत्र की विविधता के कारण थार के रेगिस्तानी क्षेत्रों में इस प्रकार की कार्बन खेती के लिए प्राकृतिक रुप से पैदा होने वाली स्थानीय वानस्पतिक प्रजातियों का पौधारोपण के लिये उपयोग पर्यावरणीय दृष्टि से ज्यादा उपयुक्त हो सकता है, जिनमें कार्बन–डाई ऑक्साइड अधिग्रहण क्षमता अधिक हो एवम् जो कृषि अयोग्य भूमि में सफलतापूर्वक पैदा होकर वृद्धि कर सकें। जर्मन वैज्ञानिको द्वारा प्रस्तुत कार्बन खेती की कम्प्यूटर आधारित काल्पनिक परियोजना की प्रेरणा स्वरुप इस आलेख के माध्यम से थार रेगिस्तान के शुष्क पश्चिमी मैदानी क्षेत्रो में वायु के कारण मृदा क्षरण से प्रभावित और कृषि अयोग्य हो रही 1,14,19,000 हेक्टेयर भूमि में स्थानीय

बहुपयोगी शुष्क झाड़ी खींप *(Leptadenia pyrotechnica)* संरक्षण आधारित कार्बन खेती से कार्बन–डाई ऑक्साइड उत्सर्जन में कमी की संभावनाओं पर आधारित काल्पनिक परियोजना की रुपरेखा प्रस्तुत की जा रही है।

खींप संरक्षण आधारित कार्बन खेती प्रस्तावित परियोजना के मुख्य बिन्दुः-

1. खींप एक बहुपयोगी शुष्करोधी रेगिस्तानी झाड़ी है, जिसका परम्परागत रुप में दवा, खाद्य, पशु आहार (विशेष ऊँट के चारे के रुप में), रेशा निकालने, झोपड़ी एवम् रस्सी बनाने तथा ईंधन के रुप मे किया जाता है।
2. खींप मे कार्बन अधिग्रहण एवं मृदा स्थिरीकरण की क्षमता काफी अधिक होती है, इसलिए ये क्षेत्र के पर्यावरण संतुलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
3. प्रस्तुत परिकल्पित परियोजना में खींप की कार्बन–डाई ऑक्साइड उत्सर्जन में कमी करने की अधिक क्षमता को समावेशित किया गया है।
4. परियोजना 'उपयोग से संरक्षण' अवधारणा पर आधारित है और इसमें किसानों और भागीदारों के वास्तविक जुड़ाव हेतु उनको तात्कालिक एवम् प्रत्यक्ष लाभ मिल सकें, के तथ्य को भी सम्मिलित किया गया है, जो इस प्रकार की व्यापक जन हित योजनाओं के लिए आवश्यक है। इसके लिये सर्वप्रथम स्थानीय स्तर पर स्वयं के अनुसंधानो पर आधारित औधोगिक रुप से उपयोगी खींप से मूल्य परिवर्द्धित उत्पादो की विपणन की संभावनाओ को रेखांकित किया गया है।
5. अरब के रेगिस्तान में विशाल एकल 10,000 हेक्टेयर के व्यापक क्षेत्रफल में एक ही वानस्पतिक प्रजाति जेट्रोफा कुरकस आधारित कार्बन खेती किया जाना प्रस्तावित है। लेकिन प्रस्तुत परियोजना में बंजर एवम् कृषि अयोग्य भूमि की मेड़ों (Boundaries) पर ही खींप आधारित कार्बन खेती किया जाना प्रस्तावित है। इसके लिए क्षेत्र में प्राकृतिक रुप से पायी जाने वाली खींप का संरक्षण एवम् खींप का नये क्षेत्रो में पौधारोपण किया जाना प्रस्तावित है।
6. विकेन्द्रीकरण के कारण खींप आधारित कार्बन खेती से व्यापक क्षेत्रो में लाभ होगा एवम् मेड़ों (Boundaries) पर ही खींप उगाने से खेत की खाली जमीन पर संभव हो तो कृषि कर लाभ भी प्राप्त किया जा सकता है।
7. खींप आधारित कार्बन खेती से उतरी–पश्चिमी राजस्थान के थार रेगिस्तान में कार्बन अधिग्रहण की सैद्धान्तिक गणनाः–

उतरी–पश्चिमी राजस्थान के थार रेगिस्तान में मृदा क्षरण से काफी भूमि प्रभावित होकर कृषि अयोग्य हो रही है। आफरी (AFRI) जोधपुर के अनुसंधान कार्यो के आधार पर यह निष्कर्ष निकला है कि लगभग 1,14,19,000 हेक्टेयर भूमि वायुजनित मृदा क्षरण से प्रभावित है। (2) साथ–साथ इसी क्षेत्र में स्वाभाविक रुप से उगने वाली खींप की कार्बन अधिग्रहण क्षमता की गणना की है। इसके अनुसार खींप बायो–मास की कुल औसत कुल उपलब्धता 128.77 कि.ग्रा/हेक्टेयर है तथा जिसमें कार्बन की औसत मात्रा 44.91% है। साधारण गणितीय आंकलन के आधार पर खींप की प्रति हेक्टेयर कार्बन अधिग्रहण क्षमता 128-77 *44-91/100= 58.90 कि.ग्रा होगी। 10,000 हेक्टयर क्षेत्रफल के लिये इसका अनुमानित आँकड़ा 5890.00 कि.ग्रा होगा, जो काफी महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकता है।

प्रारंभिक स्तर पर केवल इस मरुस्थलीय क्षेत्र में स्वाभाविक रुप से उगने वाली खींप का केवल सुनियोजित संरक्षण ही किया जा सके तो इससे काफी अधिक मात्रा में कार्बन अधिग्रहण से कार्बन–डाई ऑक्साइड गैसों के उत्सर्जन में प्रति वर्ष काफी कमी की जा सकती

है। नये और व्यापक वायु से मृदा क्षरण प्रभावित क्षेत्रो में खींप के साथ अन्य स्थानीय प्रजातियों के संरक्षण और पौधारोपण से कार्बन अधिग्रहण और कार्बन–डाई ऑक्साइड उत्सर्जन में महत्वपूर्ण कमी करने की प्रबल संभावनाऐं है।

साथ–साथ ही औद्योगिक रुप से उपयोगी दवाएँ, खाद्य, पशु आहार (विशेष ऊँट के लिये चारा) रेशा एवम् बायोफ्यूल प्राप्त होगा। जिससे किसानों और भागीदार दोनो को तात्कालिक एवम् प्रत्यक्ष लाभ मिलेगा और वे व्यावहारिक रुप से ऐसी व्यापक जनहितकारी एवम् लोक कल्याणकारी योजनाओं से जुडे रहेगें। भविष्य में वास्तकि आधार पर सरकारी एवं निजी क्षेत्रों में इस परियोजना की कियान्विति किया जाना अपेक्षित है।

संदर्भ :

1. www.earth_syst_dynam.net/4/237/2013/esd-4-237-2013.html (carbonfarming in hot,dry coastal area;an option for climate change mitigation by K.Becker et.al)
2. www.researchgate.net/publication/ 257865775 (vegetation diversity and roll of Leptadenia pyrotechnica in bio-mass contribution & carbon storage in arid zone of india, by G.Singh;A.F.R.I. Jodhpur)
3. स्वयं स्तर पर खींप पर किये गये अनुसंधान कार्यो का लेखकों के पास उपलब्ध दस्तावेजी विस्तृत विवरण के आधार पर।

"जिस देश को अपनी भाषा और अपने साहित्य के गौरव का अनुभव नहीं है, वह उन्नत नहीं हो सकता।"
- देशरत्न डॉ. राजेन्द्रप्रसाद

जे-गेट : वैश्विक ई-जर्नल साहित्य का इलेक्ट्रॉनिक गेटवे

रामदयाल रैगर

मुख्य तकनीकी अधिकारी

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

जे–गेट एक व्यापक खोज पोर्टल है जो एक शोधकर्ता को विभिन्न विषयों पर लाखों लेखों तक सिंगल पॉईंट एक्सेस प्रदान करता है जिससे शोधकर्ता का खोज कार्य बहुत आसान हो जाता है।

जे–गेट इन्फॉर्मेटिक्स इंडिया लिमिटेड, बैंगलूरू द्वारा 2001 में शुरू किया गया था तथा यह 12,118 प्रकाशकों द्वारा ऑनलाइन उपलब्ध लाखों जर्नलस लेखों तक सहज पहुंच प्रदान करता है। यह एक विशाल डेटाबेस है तथा 51,554 ई–जर्नलस अनुक्रमित कर प्रकाशकों की साइट्स पर उपलब्ध पूर्ण पाठ को लिंक करता है। जे–गेट प्लेटफार्म का इंटरफेस सरल, सहज एवं उपयोग में आसान हैं। इसमें उपयोगकर्ता को खोज फिल्टर करने की सुविधा भी दी गई है।

इसमें सामाजिक एवं प्रबन्धन विज्ञान, इंजीनियरिंग तथा प्रौद्योगिकी, जैव चिकित्सा विज्ञान, बुनियादी विज्ञान, कला एवं मानविकी तथा कृषि एवं जैविक विज्ञान विषयों से सम्बन्धित ई–जर्नलस को शामिल किया गया है।

जे-गेट की विशेषताएँ एवं लाभ :

- इसमें ऑन लाइन जर्नलस को ही शामिल किया गया है।
- इसमें वर्तमान में 51,554 ई–जर्नलस सम्मिलित की गई हैं।
- इसमें 25,272 ओपन एक्सेस ई–जर्नलस के लेखों को अनुक्रमित किया गया है तथा मूल लिंक तक भी पहुंच दी गई है।
- यह 13,110,113 ओपन–एक्सेस लेखों का लिंक प्रदान करता है।
- यह 12,118 पब्लिशर्स के ई–जर्नलस को लिंक करता है।
- इसकी साइट रोजाना अद्यतन की जाती है जिससे विषय सामग्री की विश्वसनीयता बनती है।
- इसमें लेखों के शीर्षक, लेखक, लेखक का पता अथवा संस्थान तथा प्रमुख शब्दों (की–वर्ड्स) के आधार पर खोज सुविधा दी गई है।
- इसमें प्रतिदिन 10,000 से अधिक लेख जुड़ते हैं।
- यह दिन–रात चौबीसों घंटे उपलब्ध रहता है।

जे-गेट के उत्पाद/सेवाएँ:

जे–गेट दो तरह के उत्पाद/सेवाएँ प्रदान करता है :

(अ) जे-गेट पोर्टल :

इसमें निम्नलिखित सम्मिलित है :

1. सामग्री की तालिका (टेबल ऑफ कन्टेन्ट्स)
   - 51,554 ई–जर्नलस
   - जर्नल के नाम, प्रकाशक तथा विषयानुसार ब्राउज करने की सुविधा
   - बुनियादी ग्रंथसूची डेटा के साथ सार सुविधा
   - लेखक का पता एवं ई–मेल जानने की सुविधा
   - एकरूप ब्राउज प्रारूप में सभी जर्नलस की सामग्री में सर्च सुविधा
   - खरीदे गए एवं मुफ्त में उपलब्ध पूर्ण पाठ तक लिंक सुविधा
   - संघ सूची तक पहुंचने हेतु लिंक सुविधा
   - रोजाना अद्यतन सुविधा
2. जे–गेट डेटाबेस
   - जे–गेट डेटाबेस में टेबल ऑफ कंटेट्स की तुलना में व्यापक और समग्र सामग्री उपलब्ध है,
   - विषय श्रेणी को तीन स्तर पर वर्गीकृत किया गया है,

- शीर्षक, लेखक, विषयवार, प्रमुख शब्द, वर्ष तथा इन सभी के संयोजन के अनुसार सर्च सुविधा प्रदान की गई है,
- विषयवार अनुक्रमित किया गया है,
- उपलब्ध होने पर सार सहित ग्रंथसूची डेटा उपलब्ध करवाया गया है,
- लेखक का पता और ई–मेल पता भी उपलब्ध करवाया गया है,
- खरीदी गई तथा मुफ्त में उपलब्ध जर्नलस का पूर्ण पाठ तक पहुंचने हेतु लिंक दिया गया है,
- संघ सूची का लिंक भी उपलब्ध करवाया गया है।
- रोजाना अद्यतन सुविधा प्रदान करता है।

(ब) जे-गेट अनुकूलन सुविधाएँ

1. जे–गेट कस्टम कन्टेन्ट (जेसीसी) : खरीद की गई जर्नलस तक स्थानीय इंटरनेट/इंटरनेट के माध्यम से आसान पहुंच दी जाती है।

2. जे–गेट कस्टम कन्टेन्ट फॉर कंसोर्सिया (जेसीसीसी) :
   - यह खरीदी गई जर्नलस संसाधनों को पुस्तकालयों के सजातीय समूह को सुविधा प्रदान करता है।

जे–गेट उपयोगकर्ताओं को विशिष्ट कीवर्ड या लेखक के नाम के साथ–साथ अलर्ट सेट करने में सक्षम बनाता है। जब भी नए लेख का अपडेट होगा तो उपयोगकर्ता को ई–मेल या आरएसएस फीड अपडेट के माध्यम से एक सूचना प्राप्त होगी। यह पुस्तकालयाध्यक्षों के लिए संसाधनों को साझा करने के लिए सुविधाजनक और आसान बनाता है। जे–गेट में अगर पूर्ण पाठ (फुट टेक्स्ट) लेख उपलब्ध नहीं है तो उपयोगकर्ता लेखक के नाम पर क्लिक करके लेखक तक पहुंच सकता है और उनके लेख की प्रति की मांग कर सकता है। अगर जे–गेट पर ऑन–लाइन सार ही उपलब्ध है तो सम्बन्धित पुस्तकालय से ऑनलाइन अनुरोध कर लेख का पूर्ण पाठ मंगवाया जा सकता है।

अधिक जानकारी https://jgateplus.com/home/ पर उपलब्ध है।

"हमारी नागरी दुनिया की सबसे अधिक वैज्ञानिक लिपि है।"
- राहुल सांकृत्यायन।

स्वतंत्रता

गुलामी की जंजीरों में इस देश को परदेसियों ने, विचारहीन बना दिया.
देश वासियों की कुर्बानियों ने फिर से दीपक जला दिया

स्वतन्त्र विचारों की गंगा जब सींचने लगी,
मिट्टी से सोना उगलने लगी

उड़ते पंछी से पूछो, बहती हवा से पूछो, नदी के बहते पानी से पूछो
कहीं रूकना चाहोगे, सबने अपना सिर हिलाया

मुझे स्वतन्त्र ही रहने दो,
कुछ तो मुझे कहने दो
विचारों को तो थिरकने दो,
मुझे अपने उड़ान तो उड़ने दो

मुझे स्वतंत्र तो रहने दो, मुझे स्वतंत्र तो रहने दो

विचारों पर अधिकार जरूरी है,
छोटे बड़े का अंतर जरूरी है
जीवन में संयम भी जरुरी है,
बच्चों के लिए दिशा भी जरूरी है
दिशा की महक भी जरूरी है,

चहक के लिए जिंदगी की गति भी जरूरी है

दिशाहीन होकर प्रगति ना कर पायेगे,
अपने अनुजों को क्या सिखायेंगे

इससे पहले की मेरी प्रगति मेरी ही सब्र का बाँध बने
स्वतंत्र रहकर इस जीवन को कुछ नया देना चाहता हूँ

जय हिन्द, जय भारत

राजेश कुमार सावल
निदेशक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

मैं भारत हूँ...

मैं भारत हूँ...
क्षण–प्रतिक्षण बदल रहा हूँ...
कभी आतंक की आग से,
कभी भ्रष्टाचार की आग से,
क्षण–प्रतिक्षण जल रहा हूँ...
मैं भारत हूँ... क्षण–प्रतिक्षण बदल रहा हूँ...

जल रही है संस्कारों की अस्मिता,
मानव वहशी हो, तो क्यों ना हो दुश्चिंता,
क्षण–प्रतिक्षण विकल रहा हूँ...
मैं भारत हूँ... क्षण–प्रतिक्षण बदल रहा हूँ...

नहीं मजहब नहीं जाति विवाद है,
मरती मानवता जहाँ, वहीं तो आतंकवाद है,
क्षण प्रतिक्षण जल रहा हूँ
मैं भारत हूँ... क्षण–प्रतिक्षण बदल रहा हूँ...

कहीं कोई ज्वाला–सी जल रही है,
नव–पीढ़ी में क्रान्ति सी पल रही है,
क्षण प्रतिक्षण उबल रहा हूँ
मैं भारत हूँ... क्षण–प्रतिक्षण बदल रहा हूँ...

फिर से सोने की चिड़िया कहलाने को,
''निर्मोही'' फिर से कोहिनूर घर में लाने को,
क्षण–प्रतिक्षण मचल रहा हूँ
मैं भारत हूँ... क्षण–प्रतिक्षण बदल रहा हूँ...

श्याम निर्मोही
गीतकार, बीकानेर

आलोचना भी जरूरी है

बबीता

शोधार्थी

राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने गद्य के अविर्भाव को आधुनिक काल की सबसे प्रधान घटना मानी है क्योकि गद्य के बिना पद्य में विचार विश्लेषण का विस्तार संभव नही। गद्य के साथ ही साहित्य की नयी–नयी विधाएँ अस्तिव में आई जिनका प्रसार पत्र पत्रिकाओं के प्रकाशन के साथ संभव हुआ।

आलोचना की शुरूआत भी पत्र पत्रिकाओं से ही हिन्दी में हुई। जिसे प्रारंभ में समालोचना, आलोचना, समीक्षा आदि कई नामों से व्यवहार में लाया गया किन्तु वर्तमान में आलोचना नाम ही प्रयुक्त होता है।

रचना के आधार पर आलोचक जो नयी वैचारिक संघटना करता है। उसका अपना स्वंतत्र आस्तिव होता है और यही आलोचना कहलाती है। आलोचक प्रायः साहित्य जगत के विविध स्वरूपों से पुर्णरुपेण विज्ञ होता है तथा साहित्य की एक या अधिक विधाओं में उनका प्रतिष्ठित योगदान भी होता है। सामान्यतया आलोचना कार्य अत्यंत क्लिष्ट व सूक्ष्म निरीक्षण पर आधारित होता है। जो काव्य के अंतर्निहित भावों व साहित्यकार की विचारधारा पर प्रहार करता है। कई बार आलोचना – प्रत्यालोचना का स्वरूप वृहद् रूप ले लेता है जिसके कारण साहित्यकार समूह पृथक –पृथक विचारधारा को प्रक्षय देते प्रतीत होता है अथवा उस विचारधारा के प्रचार प्रसार या आलोचना का कार्य भी कहते है। ये सभी प्रवृत्तियां नवीन साहित्य सृजन की पृष्ठभूमि तैयार करती है।

ऐतिहासिक विकास क्रम में कलाकृति पहले आई और समीक्षा बाद में आरंभ की गई। प्रायः दोनो क्रियाएं समान्तर चली क्योंकि कलाकृति को देखने या सुनने के पश्चात चावक के पास उसे पसंद या नापसंद करने की धारणा अवश्य विद्यमान थी। इसी समानान्तर अस्तित्व के कारण काव्य के युगीन विकास के साथ साथ समीक्षात्मक विचारों को विकसित होता देखा गया। समीक्षा रसबोध की बौद्धिक व्याख्या और मूल्यांकन है, जिसकी व्याख्या व आकंलन के लिए जिन सिद्धांतो को प्रयुक्त किया जाता है, उन्हें साहित्य शास्त्र कहते हैं। समीक्षा और समीक्षक का ऐतिहासिक अस्तिव है जो कृति एंव कृतिकार से भिन्न है इसी कारण से समीक्षा या आलोचना को निरंतर स्वीकार किया गया।

साहित्यिक अध्ययन या समीक्षा शास्त्र की सर्वप्रथम उपयोगिता पाठक के लिए है तथा किसी कलाकृति का अंतिम उद्देश्य पाठक प्राप्त करना है। कलाकृति का मूल्यांकन करने की क्षमता पाठक में होनी चाहिए, अन्यथा वह अयथार्थ, कृत्रिम, हानिकर साहित्य सजृन को ही सराहना का मुल्य दे बैठेगा। समीक्षा सामान्य पाठक को वे सिद्धांत देती है जिसके पाठक का सौन्दर्यबोध और जीवन बोध अधिक गहरा होता है। साथ ही व्यावहारिक समीक्षा उन सिद्धांतों को लागू करने का रास्ता बताने के साथ–साथ पाठक को उपयोगी व अनुपयोगी कृतियों का अंतरनिर्देश कर सकने की शक्ति या क्षमता भी प्रदान करती है। वही क्षमता साहित्य की आलोचना के रूप में प्रकट होती है।

सामान्यता प्रत्येक मनुष्य में अंतर कर सकने की जन्मजात प्रवृति होती है जो संपर्क में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति, प्रदार्थ या घटना की जाने–अनजाने में समीक्षा करने लगता है। इसी प्रकार प्रत्येक प्रौढ़ व्यक्ति समीक्षक होता है और यही अंतर सामान्य पाठक व समिक्षक का होता है जो कृतित्व का विविध दृष्टिकोणों से परीक्षण कर अपने विचार सभी पाठकों को प्रस्तुत करता है। आत्मपरक अनुभुति और वस्तुपरक अनुभुति सचेत पाठक के लिए उतनी ही आवश्यक है जितनी कृतिकार के लिए मानी जाती है। कृतिकार के पेष्य अनुभव का मात्र भावन करना तथा उसका परीक्षण न करना, जीवन के अप्रभाव से चलना ही नही बल्कि पीछे लौटना भी है।

समीक्षा की उपयोगिता कवि के लिए भी है, जिसके

सामने सृजन काल में दो मुख्य समस्याएँ रहती हैं। इसमें प्रथम अभिव्यंजना की समस्या और दूसरी अनुभूति की मूल्यपरक चिन्ता तथा समीक्षा, इन दोनो क्षेत्रों में उसे सहायता पहुंचा सकती है। समीक्षा द्वारा काव्य, काव्य की प्रतिक्रिओं, उपमानों के औचित्य एवं शक्ति का विवेचन निरंतर जारी रहता है। आलोचक यह दर्शाता है कि किसी कवि की कोई उक्ति मार्मिक व प्रभावकारी किन तत्वों के समावेश से बनी या कमियां किन कारणों से विद्यमान रहीं। साहित्य के आंतरिक अध्ययन में अभिव्यंजना रीति की चर्चा अनिवार्य होती है। रचनाकार इन समीक्षकों के अध्ययन से अपनी अभिव्यक्ति को उपयुक्त आकार देने में समर्थ होता है। कला सृजन एक अचेतन–चेतन क्रिया है तथा प्ररेणा किसी अचेतन अविश्लेषित स्रोत से आती है जिससे लेखक सचेत व सजग हो उठता है।

आलोचना के माध्यम से साहित्य के प्रति पाठकों में रूचि जाग्रत करना सभंव है, जिसमें काव्य के आधारपरक मानदण्ड़ों के अनुभव विवेचन से उसके विभिन्न पक्षों को उजगार किया जाता है। आलोचना के स्वस्थ स्वरूप में साहित्यपरक मानदण्डों के अनुसार विचलन को दर्शाकर पाठक में उत्सुकता व कौतूहल बनाया जा सकता है। इस स्वरूप से पाठक में मूल साहित्य को पढ़ने की प्ररेणा जागृत होती है।

"बिना मातृभाषा की उन्नति के देश का गौरव कदापि वृद्धि को प्राप्त नहीं हो सकता।"
- गोविंद शास्त्री दुगवेकर।

भारतीय कृषि–प्रौद्योगिकी विकास में बौद्धिक सम्पदा अधिकार

अनुराधा भारद्वाज[1], दिनेश कुमार[2], वारिज नयन[3], पार्वती शर्मा[4], यशपाल[5] एवं भूपेन्द्र नाथ त्रिपाठी[6]

[1,3]वरिष्ठ वैज्ञानिक, [2,5]प्रधान वैज्ञानिक, [4]अनुसंधान अध्येता, [6]निदेशक

[1,4,5,6]भाकृअनुप–राष्ट्रीय अश्व अनुसंधान केन्द्र, हिसार, [2]भारतीय कृषि सांख्यिकी अनुसंधान संस्थान, दिल्ली, [3]केन्द्रीय भैंस अनुसंधान संस्थान, हिसार

बौद्धिक सम्पदा अधिकार (इन्टेलैक्च्युल प्रोपर्टी राईटस) का अर्थ है किसी नवीनीकरण/नवीनीकृत कार्य, आविष्कार, डिजाईन व निर्माण या अन्य दूसरी तरह का कार्य जिस पर एक व्यक्ति या व्यापार का कानूनी रूप से अधिकार हो। लगभग सभी व्यवसायों के अपने बौद्धिक सम्पदा फार्म या बौद्धिक सम्पदा प्रारूप होते हैं जो कि एक व्यापार परिसंपति हो सकती है। बौद्धिक सम्पदा अधिकार वैधनिक अधिकार है जो कि किसी एक व्यक्ति व मालिक को प्रदान किए जाते हैं ताकि निश्चित अवधि के दौरान एक ही व्यवसाय में आविष्कार के प्रयोग का एकाधिकार हो तथा दूसरों के द्वारा शोषण करने से बचा जा सके। यह अधिकार आविष्कार व मालिकों को अपने काम के लिए लाभांवित करता है। बौद्धिक सम्पदा उसकी व उसके ज्ञान का खुलासा करने के एवज में एक आविष्कारक या निर्माता को आर्थिक दृष्टि से भुगतान करता है।

आविष्कार/नवाचार क्या है?

आविष्कार का अर्थ है एक नए उत्पाद या प्रक्रिया जिसमें एक आविष्कारकशील कदम और औद्योगिक अनुप्रयोग शामिल हों। नवाचार का मतलब है: एक उपयोगी मशीनरी या प्रक्रिया के रूप में नए विचारों, किसी भी व्यक्ति द्वारा, स्वयं की बुद्धि का उपयोग करने का सफल शोषण नवाचार के रूप में कहा जाता है। हर नवाचार एक आविष्कार नहीं हो सकता है लेकिन हर आविष्कार एक नवाचार है।

बौद्धिक सम्पदा अधिकार योग्य क्या होता है?

- अपूर्व आविष्कार
- आविष्कारीय परिपाटी से युक्त
- उद्योगों के प्रयोग के लिए उपयुक्त
- आर्थिक रूप से महत्वूपर्ण

बौद्धिक सम्पदा के सामान्य प्रकार में

- **प्रतिलिप्याधिकार/कॉपीराइट**– यह लिखा या प्रकाशित काम जैसे किताबें, गाने, फिल्मों, वेब सामग्री और कलात्मक काम की रक्षा करता है।
- **एकस्वाधिकार/पेटेंट**–यह वाणिज्य आविष्कार जैसे नया व्यापार, उत्पाद व प्रक्रिया की रक्षा करता है।
- **प्रारूप/डिजाईन**–यह चित्र या कम्प्यूटर मॉडल की रक्षा करता है।
- **व्यापार चिन्ह/ट्रेड मार्क**–यह चिन्ह, प्रतीक, लोगो, शब्दों या आवाज जो उनकी अलग पहचान के रूप में है की रक्षा करता है। ट्रेड मार्क व्यापारियों/कम्पनियों की अपने प्रतिद्वंदियों से अलग करती है।

बौद्धिक सम्पदा पंजीकृत व अपंजीकृत हो सकता है।

अपंजीकृत बौद्धिक सम्पदा के साथ, आप स्वचालित रूप से अपनी रचना पर कानूनी अधिकार नहीं रखते हैं। अपंजीकृत बौद्धिक सम्पदा अधिकार में कॉपीराइट, अपंजीकृत डिजाईन अधिकार, आम कानून ट्रेडमार्क, डेटाबेस अधिकार, गोपनीय पंजीकृत और व्यापार रहस्य शामिल हैं।

पंजीकृत बौद्धिक सम्पदा अधिकार के लिए बौद्धि क सम्पदा कार्यालय में अपने पंजीकृत अधिकार के लिए अधिकारी को आवेदन करना अनिवार्य है। यदि आप ऐसा नहीं करते, तो दूसरे आपकी कृतियों का लाभ उठाने के लिए स्वतंत्र है। पंजीकृत बौद्धिक सम्पदा अधिकार में पेटेंट, पंजीकृत ट्रेडमार्क तथा पंजीकृत डिजाईन अधिकार शामिल हैं।

एकस्वाधिकार/पेटेंट:

एकस्वाधिकार आविष्कारक या उसके प्रति व्यक्ति को आविष्कार का एकमात्र प्रयोग करने के लिए दिया गया एकाधिकार है जो किसी भी प्रकार की प्रतिस्पर्ध या नकल होने के भय से उसे सुरक्षित करता है। यह अधिकार केवल एक निश्चित समय के लिए ही दिया जाता है जिसको एकस्वाधिकार की अवधि (लगभग बीस वर्ष) कहते हैं परन्तु यदि नवीनीकरण शुल्क का भुगतान नहीं किया गया हो तो एकस्वाधिकार की अवधि में भी यह एकाधिकार समाप्त हो सकता है। आविष्कारक या उसके प्रति व्यक्ति को आविष्कार के एकस्वाधिकार के लिए आवेदन पत्र कार्यालय में देना होता है। इस आवेदन पत्र के साथ, संपूर्ण विनिर्देश में उसको आविष्कार का पूर्ण विवरण देना होता है। एकस्वाधिकार दिये जाने का निर्णय होने पर, एकस्वाधिकार कार्यालय यह संपूर्ण विनिर्देश प्रकाशित करता है। एक बार प्रकाशन होते ही, एकस्वाधिकार विनिर्देश जनता के निरीक्षण के लिए उपलब्ध हो जाता है। एकस्वाधिकार कार्यालय से प्रकाशित की गई, एकस्वाधिकार संपूर्ण विनिर्देश की प्रति की कोई भी व्यक्ति प्राप्त कर सकता है। एकस्वाधिकार धारक (आविष्कारक या उसका प्रतिव्यक्ति जिसे एकस्वाधिकार प्रदान किया गया हो) को ही, एकस्वाधिकार में दिये हुये आविष्कार के प्रयोग का एकाधिकार है। इस अधिकार का प्रयोग कई तरह से किया जा सकता है:

- इस आविष्कार पर आधरित एकस्वाधिकार धारक स्वयं के व्यवसाय को विकसित कर सकता है, क्योंकि एकस्वाधिकार की अवधि में किसी भी प्रकार की प्रतिस्पर्धा या नकल होने के भय से वह सुरक्षित रहता है।
- एकस्वाधिकार धारक परस्पर समझौता हुये (आपसी करार) मूल्य पर एकस्वाधिकार का लाइसेन्स किसी अन्य व्यक्ति या कम्पनी को देकर इसके प्रयोग करने की अनुमति दे सकता है।
- वह पर्याप्त क्षतिपूर्ति के आधर पर इसे पूरी तरह बेच भी सकता है।

प्रारूप/डिजाईन:

डिजाईन से संबंधित कानून डिजाईन अधिनियम 2000 तथा डिजाईन नियम 2001 के अंतर्गत आते हैं। डिजाईन अधिकतम दस वर्ष तथा दोबारा आवेदन पर और पाँच साल के लिए मान्य है।

व्यापार चिन्ह/ट्रेडमार्क:

ट्रेडमार्क कानून 1999 अधिनियम व ट्रेडमार्क नियम 2002 के अंतर्गत जो कि 2003 में प्रभावी हुआ, को शामिल किए गए हैं। एकस्वाधिकार के लिए नियामक प्राधिकरण में ट्रेडमार्क, एकस्वाधिकार व डिजाईन के महानियंत्राक जो कि औद्योगिक नीति व संवर्धन विभाग के अधीन है, शामिल किया गया है। व्यापार के नाम भी अपनी इच्छा के अनुसार या उपनाम के तहत व्यापार करने वाले लोगों के लिए भारत में ट्रेडमार्क का एक फार्म का गठन किया गया है जो कि मौजूदा व्यापार नाम के साथ नए नाम का भी संरक्षण करता है।

साईबर नेटवर्क के विस्तार के कारण व्यापारियों को यह सलाह दी जाती है कि डोमेन नाम जितना जल्दी हो सके रजिस्टर करा लेना चाहिए। पंजीकृत करने में भी लगभग दो साल तक लग जाते हैं। भारत में एक ट्रेडमार्क दस साल के लिए वैध है और उसके बाद आगे की दस साल की अवधि के लिए या अनिश्चित काल के लिए नए सिरे से किया जा सकता है।

बौद्धिक सम्पदा अधिकारों का महत्व

- विश्व की अस्सी प्रतिशत तकनीकी जानकारी बौद्धिक सम्पदा अधिकारों अथवा एकस्वाधिकारों में निहित होती है।
- बौद्धिक सम्पदा अधिकारों में प्रकट किये हुए तकनीकी ज्ञान का बड़ा प्रतिशत किसी अन्य प्रकाशन में कभी प्रकाशित नहीं किया जाता है।
- बौद्धिक सम्पदा अधिकार केवल एकस्वाधिकार स्वीकृत देशों में सीमित समय के लिए प्रभावी होता है।
- बौद्धिक सम्पदा अधिकार/एकस्वाधिकार आविष्कार का सर्वप्रथम प्रकाशन होता है।
- बौद्धिक सम्पदा अधिकार/एकस्वाधिकार तकनीकी की बारीकियों और इसके व्यापक क्षेत्रो के साथ–साथ एकस्वाधिकार तकनीकी जानकारी का एकमात्र भंडार है।

- बौद्धिक सम्पदा अधिकार/एकस्वाधिकार एक मानक ढंग में लिखा जाता है। एक बार इसकी जानकारी होने पर संदर्भ सूचना पाना सरल होता है।
- वर्गीकरण प्रणाली के उपयोग से तथा इलेक्ट्रॉनिक तकनीकी पर आधारित प्रणाली के उपयोग के माध्यम से बौद्धिक सम्पदा अधिकार सूचना को आसानी से प्राप्त कर सकते हैं।

भारतीय कृषि के प्रौद्योगिकी विकास में बौद्धिक संपदा प्रबंधन और प्रौद्योगिकी हस्तांतरण/व्यावसायीकरण का योगदान

भारत वह विशिष्ट देश है जहां कृषकों के अधिकारों को स्थापित करने व सुनिश्चित करने के लिए राष्ट्रीय विधान को लागू किया गया है। इस अधिनियम के अंतर्गत कृषक समुदाय के भूत, वर्तमान तथा भावी योगदानों को मान्यता प्रदान की गई है तथा इसमें कृषक समुदायों/कृषकों को कृषि–जैव विविधता के संरक्षण में किए गए उनके योगदानों के लिए पुरस्कृत करने का अवसर भी उपलब्ध कराया गया है। भारत विश्व व्यापार संगठन के बौद्धिक सम्पदा अधिकारों के व्यापारिक समझौते (ट्रिप्स) का सदस्य है। ट्रिप्स के अनुच्छेद 27(3)(ख) के अनुसार सदस्यों को सूक्ष्मजीवों के अतिरिक्त पौधों और पशुओं व गैर–जीवविज्ञानी और सूक्ष्म जीवविज्ञानी प्रक्रियाओं के अतिरिक्त पौधों या प्राणियों के उत्पादन के लिए अनिवार्य जीवविज्ञानी क्रियाओं को अपनाने की दंड रहित स्वतंत्रता है। सभी सदस्यों को प्रभावी सु जेनेरिस प्रणाली द्वारा पौधा किस्मों की सुरक्षा के लिए प्रावधान करवाने का विचार है। भारत ने पौधा किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण (पीपीवी और एफआर) अधिनियम (2001) को सु जेनेरिस प्रणाली अपनाकर लागू किया। पौधा किस्मों, कृषकों व पादप प्रजनकों के अधिकारों की रक्षा तथा पौधों की नई किस्मों के विकास को बढ़ावा देने के लिए एक प्रभावी प्रणाली की स्थापना हेतु यह आवश्यक समझा गया है। कृषकों के नई पौधा किस्मों के उपलब्ध पादप संसाधनों के विकास, उन्हें सुरक्षित करने व उन्हें सुधारने की दिश में उनके द्वारा किए गए किसी भी प्रयास को मान्यता प्रदान करने के लिए कृषकों के अधिकारों की रक्षा करना अनिवार्य है। साथ ही कृषि विकास में तेजी लाने के लिए प्रजनकों को अधिकार प्रदान करना भी आवश्यक है ताकि नई पौधा किस्मों के विकास के लिए अनुसंधान एवं विकास में निवेश को प्रोत्साहित करने की दिशा में प्रगति हो।

पीपीवी और एफआर अधिनियम की मुख्य विशेषताएं

यह अधिनियम एक सू जेनेरिस प्रणाली पर आधारित है और इस दृष्टि से विशिष्ठ है कि इसमें प्रजनकों, किसानों, कृषक समुदायों व अनुसंधानकर्ताओं के अधिकारों को पूर्ण मान्यता प्रदान की गई है। इसके अंतर्गत किसी प्रजनक या उसके अधिकारी, उसके एजेंट या लाइसेंस प्राप्तकर्ता को पंजीकृत किस्म के बीज को उत्पन्न करने, बेचने, उसका विपणन करने, वितरण करने, आयात ओर निर्यात का एकमात्र अधिकार प्राप्त है। जहाँ तक कृषकों के अधिकारों का संबंध है, यह अधिनियम कृषकों को किस्म उगाने वाले, संरक्षक और प्रजनक के रूप में मान्यता प्रदान करता है और यह प्रावधान कराता है कि कृषक किस्मों को पंजीकृत किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त इस अधिनियम में पंजीकृत किस्म के अनिवार्य लाइसेंस का भी विशेष परिस्थितियों में प्रावधान है जब बीज/रोपण सामग्री उपयुक्त मूल्य अथवा मात्रा में जन–सामान्य को उपलब्ध न कराई गई हो। कोई भी व्यक्ति अथवा व्यक्तियों का समूह अथवा कोई संगठन वृतिक लाभ में भागीदारी का दावा कर सकता है, बशर्ते कि पादप आनुवंशिक सामग्री उसकी हो तथा उसने पंजीकृत किस्म के विकास में भागीदारी की हो। अनुसंधानकर्ताओं को प्रयोग अथवा अनुसंधान करने के लिए किसी भी पंजीकृत किस्म के उपयोग करने का अधिकार है तथा ऐसी किस्म का उपयोग किसी व्यक्ति द्वारा किस्म के आरंभिक स्त्रोत के रूप में अन्य किस्मों के सृजन के लक्ष्य से किया जा सकता है।

पादप प्रजनकों के अधिकार

पादप जनकों का अधिकार इस अधिनियम का प्रमुख प्रावधान है जिसमें प्रजनक को अपनी किस्म के लिए अंतिम सुरक्षा का अधिकार है ताकि, पंजीकरण हेतु आवेदन दाखिल करने तथा प्राधिकरण द्वारा अंतिम निर्णय लेने के बीच की अवधि के दौरान किसी तीसरे पक्ष द्वारा कोई अनुचित उपयोग न किया जा सके। किसी नई किस्म का बार–बार उपयोग करने पर उस पंजीकृत

किस्म के प्रजनक से प्राधिकार प्राप्त करना आवश्यक होता है। अनुसंधानकर्ताओं के लिए भी विशेष अधिकारों का प्रावधान है।

कृषकों के अधिकार

इस अधिनियम के अंतर्गत नवीन किस्मों की नवीनता एवं नवीनीकरण के लिए पौधा किस्म सुरक्षा में डीयूएस की अंतर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त प्रणाली के सिद्धांतों को अपनाया जाता है। कोई भी व्यक्ति निम्न में से किसी के भी के लिए पंजीकरण हेतु आवेदन कर सकता है।

1. नई किस्म अधिनियम की धारा 29(2) के अंतर्गत विशिष्टीकरण ऐसे गुण या प्रजातियां विद्यमान किस्म।
2. बीज अधिनियम 1966 की धारा 5 के अंतर्गत अधिसूचित– सामान्य ज्ञान की किस्म (वीसीके)।
3. कृषक किस्म, किसानों द्वारा उनके खेत में परंपरागत रूप से उगाई गई और विकसित की गई किस्म, ऐसी वन्य संबंधी या भू–प्रजाति जिसके बारे में किसानों को सामान्य ज्ञान है।
4. अनिवार्य रूप से व्युत्पन्न किस्म (ईडीवी) नई किस्म या सामान्य ज्ञान की किस्मों और कृषक किस्मों के पंजीकरण की तिथि से वृक्षों और लताओं के मामले में सुरक्षा की अवधि 18 वर्ष जबकि फसलों के मामले में 15 वर्ष है। विद्यमान अधिसूचित किस्मों के लिए बीज अधिनियम, 1966 की धारा 5 (1966 का 54) के अंतर्गत केन्द्र सरकार द्वारा उस किस्म की अधिसूचना की तिथि से सुरक्षा की अवधि को 15 वर्ष के लिए और बीदारी करने या बेचने का अधिकार बशर्ते कि वह किसान किसी सुरक्षित किस्म के बीज की बिक्री न करे।

अपनी किस्मों के पंजीकरण का अधिकार: किसनों द्वारा विकसित या संरक्षित परंपरागत किस्में या उनके द्वारा विकसित नई किस्में मान्यता की पात्र हैं।

क्षतिपूर्ति का अधिकार: यदि पंजीकृत किस्म स्वामी/प्रजनक द्वारा किए गए दावों को पूरा नहीं करती है तो उसे इस कारण हुई क्षति की क्षतिपूर्ति का अधिकार है।

इस अधिनियम के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए पौधा किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण प्राधिकरण की स्थापना हुई जो एनएएससी कॉम्प्लेक्स, डीपीएस मार्ग, निकट टोडापुर, नई दिल्ली–1100012 में स्थित है।

भारत में पंजीकरण व बौद्धिक सम्पदा अधिकार को लागू करना:

भारत में बौद्धिक सम्पदा का सब प्रकार से उपयोग करने के लिए, उसे पंजीकृत करा लेना चाहिए। एकस्वाधिकार के लिए अलग–अलग पंजीकरण भारत में किया जाना चाहिए लेकिन औद्योगिक डिजाईन व अन्य अधिकारों के लिए एकस्वाधिकार सहयोग संधि है, जो आम तौर पर आसान है और जल्द ही निर्धारित शर्तों के तहत आवेदन कर सकते हैं। व्यापार के निशान अथवा ट्रेडमार्क के लिए, उन्हें भारत के भीतर ही दर्ज करना चाहिए। कॉपीराइट के लिए पंजीकरण की आवश्यकता नहीं होती लेकिन कॉपीराइट के अधिकारों के साथ पंजीकरण के तहत व्यापार के निशान, डिजाईन और एकस्वाधिकार के स्थानीय पंजीकरण में पहले से ही कहीं पंजीकृत अधिकार, भारत में प्रभावी बनने के लिए, एक सीमा के भीतर दायर की अनुमति देकर कर सकते हैं।

भारत में लागू बौद्धिक सम्पदा अधिकार

बौद्धिक सम्पदा अधिकार सिविल अदालतों के लिए या अपराधिक मुकदमा चलाने के माध्यम से कार्यवाही लाने के द्वारा लागू किया जा सकता है। भारतीय कानून बौद्धिक सम्पदा के सभी प्रकारों को, दोनों सिविल व अपराधिक कार्यवाही की प्रक्रियाओं को प्रतिस्पर्धा अधिनियम के अंतर्गत रखता है। सिविल मुकदमेबाजी में एक नुकसान यह है कि बड़े नुकसान की भरपाई की संभावना बहुत कम है और उल्लंघन के खिलाफ दंडात्मक हर्जाना भी अधिक है। हालांकि अगर उल्लंघन हुआ है तो यह सिविल कोर्ट मुकदमेबाजी से शुरू करना उचित होगा क्योंकि उल्लंघन के मामले का परिणाम अंतरिम आदेश के पश्चात रोका जा सकता है। नियमित तौर पर हर्जाना कॉपीराइट, चोरी व व्यापार चिन्ह उल्लंघन के मामलों में किया जाता है, एकस्वाधिकार मामलों में यह कम होता है। विगत वर्षों में स्थानीय उल्लंघन करने वालों के खिलाफ विदेशी कम्पनियों के पक्ष में निर्णय यह दर्शाता है कि न्यायपालिका का दृष्टिकोण निष्पक्ष है।

अन्य देशों की तरह भारत सरकार भी अपराधिक मामलों में कार्यवाही करती है। हालांकि ज्यादातर मामलों में कार्यवाही का अधिकार मजिस्ट्रेटों या पुलिस अधिकारियों को मालिकों के द्वारा मिली शिकायत पर निर्भर करता है। उल्लंघन करने वालों के खिलाफ अपराधिक कार्यवाही में जुर्माना व कारावास सहित बहुत कठोर दंड भी शामिल है। मध्यस्था या एक उल्लंघनकारी के साथ बातचीत भी विवाद के समाधन के लिए एक विकल्प के रूप में प्रभावी हो सकता है। सिविल प्रक्रिया संहिता में एक औपचारिक मध्यस्थता प्रक्रिया का प्रावधन है। बौद्धिक सम्पदा के सभी रूपों से संबंधित नियमों में संशोधन किया गया है। हाल के वर्षों में, मुख्य रूप से 1995 में विश्व व्यापार संगठन में भारत के परिग्रहण के जवाब में भारतीय बौद्धिक सम्पदा कानून पूरी तरह से और आमतौर पर यूरोपीय बौद्धिक सम्पदा कानूनों के साथ तुलनीय है, जहाँ पर अभी भी बौद्धिक सम्पदा प्रवर्तन पर बहस जारी है। प्रवर्तन में चिंता का एक मुख्य कारण नौकरशाही की देरी तथा सिविल व अपराधिक मामलों में पिछड़ापन है। इसका मतलब यह है उल्लंघन के मामले पाँच या उससे अधिक साल तक भी चलाए जा सकते हैं। वहाँ भी विशेष रूप से स्थानीय स्तर पर पारदर्शिता की कमी है। भारत में बौद्धिक सम्पदा की महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यहाँ अधिकारों का उल्लंघन करने वालों को पकड़ने के लिए छोटे व तुरंत प्रभाव के आदेशों की आवश्यकता है। भारत में कार्यरत ब्रिटेन के कारोबार के लिए यह लाभ है कि यहाँ की कानून व्यवस्था आम कानून पर आधारित है जैसे कि ब्रिटेन में है इसलिए मौलिक प्रक्रियाएं परिचित हैं जिससे कि समस्याओं से बचा जा सकता है।

भारत में बौद्धिक सम्पदा अधिकारों की रक्षा की समस्याओं से बचने के लिए सबसे महत्वपूर्ण तरीका तैयार किया जा रहा है। किसी भी संभावित मुद्दों को सुनिश्चित करने के लिए यह जरूरी है कि (1) भारतीय बौद्धिक सम्पदा अधिकारों के विशेषज्ञों की सलाह लें। (2) भारतीय बौद्धिक सम्पदा अधिकारों और सामान्य रूप से संरक्षण पर प्रकाशनों और वेबसाइटों से परामर्श लें। (3) किसी भी संगठन और व्यक्ति से निपटने के लिए जोखिम का मूल्याकंन करें। (4) अन्य विशेषज्ञों जैसे वकील, स्थानीय राजनेता, वाणिज्य और ब्रिटेन भारत व्यापार मंडल। (5) एजेंटों, वितरकों तथा आपूर्ति कर्ताओं से अपने अधिकारों की रक्षा हेतु परामर्श ले। (6) व्यापार के तरीकों से परिचित रहें तथा अलग देश में व्यापार करने पर ज्यादा लोभ करने से बचें।

बौद्धिक सम्पदा अधिकार के लिए भारत में लागू कानून इस प्रकार हैं:

- एकस्वाधिकार अधिनियम, 1970
- व्यापार चिन्ह अधिनियम (1985 मूल) 1999
- कॉपीराइट अधिनियम 1957
- डिजाईन अधिनियम 2000
- माल की भौगोलिक संकेतक (पंजीकरण और संरक्षण) अधिनियम, 1999
- संयंत्र विविधता और किसान अधिकार संरक्षण अधिनियम, 2001
  - दी कॉपीराईट (एमेंडमेंट) एक्ट, 2012 (2012)।
  - दी ट्रेडमार्क (एमेंडमेंट) एक्ट, 2010 (2010)।
  - दी कम्पीटीशन (एमेंडमेंट) एक्ट, 2009 (2009)।
  - दी कम्पीटीशन (एमेंडमेंट) एक्ट, 2007 (2007)।
  - एकस्वाधिकारों (एमेंडमेंट) एक्ट, 2005 (एक्ट नं. 15 ऑफ 2005) (2005)।
  - दी एसस्वाधिकारों एक्ट, 1970 (एज एमेंडीड अपटू एसस्वाधिकारों (एमेंडमेंट) एक्ट, 2005) (2005)।
  - दी सेमीकन्डक्टर इन्टेग्रेटीड सर्कीटस लेआऊट–डिजाईन एक्ट, 2000 (2004)।
  - दी जोग्रैफिक्ल इन्डीकेशन्स ऑफ गुडस (रजिस्ट्रेशन एंड प्रोटेक्शन) एक्ट, 1999 (2003)।
  - दी ट्रेडमार्कस एक्ट, 1999 (2003)।
  - पेटेंट्स (एमेंडमेंट) एक्ट, 2002 (2002)।
  - प्रोटेक्टशन ऑफ प्लांट वैरायटीज एंड फॉर्मर्स राईट्स एक्ट, 2001 (2001)।
  - दी डिजाईन एक्ट, 2000 (2000)।
  - कॉपीराईट (एमेंडमेंट) एक्ट, 1999 (एक्ट नं. 49 ऑफ 1999) (1999)।
  - एकस्वाधिकारों (एमेंडमेंट) एक्ट, 1999 (1999)।
  - कॉपीराईट एक्ट, 1975 (एज कन्सोलिडेटिड अपटू एक्ट नं. 49 ऑफ 1999) (1999)।
  - कॉपीराईट (एमेंडमेंट) एक्ट, 1994 (1994)।

कार्यान्वयन नियम/विनियम

- दी कस्टम्स एक्ट, 1962।
- एकस्वाधिकारों (एमेंडमेंट) रूल्स, 2016 (2016)।
- एकस्वाधिकारों (एमेंडमेंट) रूल्स, 2014 (2014)।
- रेडियो फ्रीक्यूएन्सी डिवाईसेस एंड इक्यूपमैंट्स इनकलूडिंग दी रेडियो आईडेंटिफिकेशन फ्रीक्यूएन्सी डिवाईसेस, (एक्जेम्पसन फ्रोम लाईसेंसिंग रिक्वायरमैंट) रूल्स, 2014 (2014)।
- दी सेमीकन्डक्टर इन्टेग्रेटीड सर्कीटस लेआऊट–डिजाईन एक्ट, 2000 (2014)।
- गैजेट नोटिफिकेशन ऑफ ट्रेडमार्कस (एमेंडमेंट) रूल्स, 2013 एंड ट्रेडमार्कस (एमेंडमेंट) एक्ट, 2010 (2013)।
- एकस्वाधिकारों (एमेंडमेंट) रूल्स, 2013 (2013)।
- ट्रेडमार्क (एमेंडमेंट) एक्ट, 2013 (2013)।
- दी कॉपीराईट रूल्स, 2013 (2013)।
- एकस्वाधिकारों रूल्स, 2013 (2013)।
- एकस्वाधिकारों (एमेंडमेंट) रूल्स, 2012 (2012)।
- दी अनलॉफुल एक्टीविटिज (परिवेंशन) एमेंडमेंट एक्ट, 2012 (नं. 3 ऑफ 2013) (2013)।
- दी प्रसार भारती (ब्रोडकास्टिंग कोर्पोरेशन ऑफ इंडिया) एमेंडमेंट एक्ट, 2011 (2011)।
- दी केबल टेलीविजन नेटवर्क (रेगुलेशन) एमेंडमेंट एक्ट, 2011 (2011)।
- नेशनल मोनूमैंटस ऑथोरिटी (कन्डीशन ऑफ सर्विस ऑफ चेयरमैन एंड मैम्बर ऑफ दी ऑथोरिटी एंड कन्डक्ट ऑफ बिजनेस) रूल्स, 2011 (2011)।
- दी इन्फोर्मेशन टैक्नोलॉजी (इर्न्टमिडिएरिज़ गाईडलाइन्स) रूल्स, 2011 (2011)।
- दी इन्फोर्मेशन टैक्नोलॉजी (रिज़नेबल सिक्यूरिटी प्रैक्टिस एंड प्रोसिजर एंड सेंसीटिव पर्सनल डाटा ओर इन्फोर्मेशन) रूल्स, 2011 (2011)।
- दी इन्फोर्मेशन टैक्नोलॉजी (इलैक्ट्रोनिक्स सर्विस डिलीवरी) रूल्स, 2011 (2011)।
- दी इन्फोर्मेशन टैक्नोलॉजी (गाईडलाइन्स फॉर साईबर कैफे) रूल्स, 2011 (2011)।
- ट्रेडमार्कस (एमेंडमेंट) रूल्स, 2010 (2010)।
- ट्रेडमार्कस (सैकेण्ड एमेंडमेंट) रूल्स, 2010 (2010)।
- दी एन्सीऐंट मोनूमैंटस एंड आर्चीओलोजीकल साइट्स एंड रिमेंन्स (एमेंडमेंट एंड वेलीडेशन) एक्ट, 2010 (2010)।
- प्रोटैक्शन ऑफ प्लांट वैरायटीजी एंड फार्मर्स राईट्स (क्राइटिरीया फॉर डीयूएस फॉर रजिस्ट्रेशन) रेगुलेशन, 2009 (2009)।
- प्रोटैक्शन ऑफ प्लांट वैरायटीजी एंड फार्मर्स राईट्स (थर्ड एमेंडमेंट) रूल्स, 2009 (2009)।
- प्रोटैक्शन ऑफ प्लांट वैरायटीजी एंड फार्मर्स राईट्स (सैकेंण्ड एमेंडमेंट) रूल्स, 2009 (2009)।
- डायरेक्शन ऑफ दी टेलीकॉम रेगुलेट्री आथोरिटी ऑफ इंडिया (2008)।
- डिजाईन (एमेंडेंट) रूल्स, 2008 (2008)।
- दी प्रसार भारती (ब्रोडकास्टिंग कोर्पोरेशन ऑफ इंडिया) एमेंडमेंट एक्ट, 2008 (2008)।
- सरक्युलर ऑन इम्पलीमैंटिंग दी इन्टैलक्च्युल प्रोपर्टी राईट्स (इमपोर्टेड गुड्स) एनफोर्समैंट रूल्स, 2007 (2007)।
- इन्टैलक्च्युल प्रोपर्टी राईट्स (इमपोर्टेड गुड्स) इनफोर्समैंट रूल्स, 2007 (2007)।
- दी कन्जूमर प्रोटेक्शन रूल्स, 1987 (एज एमेंडीड अपटू अक्तूबर 13, 2006) (2006)।
- दी नेशनल बोर्ड ऑफ माईक्रो, स्माल एंड मिडियम इंट्रप्राईजिस रूल्स, 2006 (2006)।
- दी कोड ऑफ क्रीमिनल प्रोसिजर, 1973 (2006)।
- बायोलोजीकल डायवर्सीटी रूल्स, 2004 (2004)।
- दी ड्रग्स एंड कोसमैटिक रूल्स, 1945 (एज करैक्टीड अपटू नवम्बर 30, 2004) (2004)।
- दी जोग्रैफिकल इंडिकेशन ऑफ गुड्स (रजिस्ट्रेशन एंड प्रोटेक्शन) रूल्स, 2002 (2002)।
- ट्रेडमार्कस रूल्स, 2002 (2002)।
- केबल टेलीविजन नेटवर्क (रेगुलेशन) एक्ट, 1995 (2002)।

- सेमीकन्डक्टर इन्टेग्रेटीड सर्कीटस लेआऊट–डिजाईन रूल्स, 2001 (2001)।
- दी डिजाईन रूल्स, 2001 (2001)।
- इन्फोर्मेशन टैक्नोलॉजी (सर्टीफाईंग आथोरिटी) रूल्स, 2000 (2000)।
- इन्फोर्मेशन टैक्नोलॉजी एक्ट, 2000 (2000)।
- दी टेलीकॉम रेगुलेट्री आथॉरिटी ऑफ इंडिया (एमेंडमेंट) आर्डिनेंस, 2000 (2000)।
- दी इंटरनैशनल कॉपीराईट आर्डर, 1999 (1999)।
- दी टेलीकॉम रेगुलेट्री आथॉरिटी ऑफ इंडिया एक्ट, 1997 (1997)।
- दी प्रसार भारती (ब्रोडकास्टिंग कोर्पोरेशन ऑफ इंडिया) एक्ट, 1990 (1997)।
- दी आर्बिटरेशन एंड कन्सीलेशन एक्ट, 1996 (1996)।
- दी सिनेमाटोग्राफ एक्ट, 1952 (1984)।
- दी कोड ऑफ सिविल प्रोसिजर, 1908 (1908)।
- दी एंटीक्यूटीज एंड आर्ट ट्रीजर रूल्स, 1972 (1972)।
- दी अनलॉफुल एक्टीविटिज (प्रिवेंशन) एक्ट, 1967 (एक्ट नं. 37 ऑफ 1967) (1967)।
- दी एन्सीऐंट मोनूमैंटस एंड आर्किओलोजीकल साइट्स एंड रिमेंन्स एक्ट, 1958 (1959)।
- इंडियन ट्रीजर ट्रोव एक्ट, 1878।
- दी इंडियन पैनल कोड (1860)।

बौद्धिक सम्पदा अधिकारों का लाभ

क. उद्योग/अनुसंधान एवं विकास (आरएण्डडी) संगठन/विश्वविद्यालय में अनुसंधायक, आविष्कारक को लाभ

- अनुसंधान की नकल को टालना।
- अनुसंधान परियोजना को प्रारंभ करने से पूर्व, पहले से चल रही योजनाओं का निर्धारण करना।
- अनुसंधान काल में तकनीकी समस्याओं का हल ढूंढना।
- तकनीकी के क्षेत्र में हुये आज तक के विकास का वृत्तांत रखना।

ख. उद्योगों को लाभ

- नया/उत्तम/सस्ता उत्पादन करने के लिए प्रचलित तकनीकी में सुधार करना।
- तकनीकी समस्याओं का तैयार समाधान पाना।
- उत्पादन तथा उत्पादकता बढ़ाना।
- उपकरणों/सामग्री पूर्ति कर्ताओं को निर्धारित करना।
- निर्माण परियोजना प्रारंभ करने से पूर्व, स्थिति का निर्धारण करना।
- योग्य तकनीकी को स्वीकार/स्थानान्तरण के लिए पहचान करना।
- स्थानान्तरण के लिए विकल्प तकनीकी का मूल्याकंन करना।

ग. व्यापार उपक्रम को लाभ

- बाजार, लाइसेंस या वितरण के लिए नये उत्पादन की पहचान करना।
- एकस्वाधिकार धारक की स्थापना करना।
- (देशी/विदेशी) प्रतिस्पर्धा की पहचान करना।
- उल्लंघन की संभावित समस्याओं को टालना।
- पूंजी लगाने योग्य क्षेत्रों की पहचान करना, आर्थिक लाभ स्थापित करना।

घ. परामर्शदाता और योजनाकर्ता को लाभ

- संभव होने लायक तकनीकी का मूल्यांकन।
- किसी विशेष तकनीकी क्षेत्र में आविष्कारों के रूख की पहचान कर तकनीकी भविष्यवाणी पर कार्य करना।
- तकनीकी संबंधी मामलों पर उद्योगों/अनुसंधान एवं विकास संगठनों/वित्तीय संस्थानों को सलाह देना।

च. वित्तीय संस्थानों को लाभ

- वित्तीय सहायता के लिये तकनीकी अनुसंधान योजना निर्धारित करना।
- सहायता दी गई परियोजनाओं की संभावना एवं प्रगति पर नज़र रखना।

छ. एकस्वाधिकार आवेदक/एजेन्ट को लाभ

एकस्वाधिकार की सार्थकता, प्रदान का विरोध, न्यायिक

खंडन और संबंधित एकस्वाधिकार कानून के अनुसार अन्य कार्यवाही के लिए पहलुओं को सुनिश्चित करना।

भारत में बौद्धिक सम्पदा संरक्षण के लिए शीर्ष युक्तियाँ

भारत में बौद्धिक सम्पदा अधिकारों की रक्षा करने के लिए सबसे महत्वपूर्ण चीजें निम्नलिखित हैं:–

1. सामान्य व्यापार प्रवृत्ति से जुड़े रहें।
2. अपने व्यापार में जितना अतिक्रमण रोक सकते हैं रोके क्योंकि रोकथाम ईलाज से बेहतर है।
3. बाजार के जोखिम का आंकलन व तैयारी करें।
4. बौद्धिक सम्पदा रक्षा के लिए स्वयं के अधिकारों को जाने।
5. बौद्धिक सम्पदा अधिकारों का पंजीकरण करें।
6. जो संगठन आपकी मदद कर सकते हैं उनसे अच्छे रिश्ते बनाएं।
7. रक्षात्मक कार्यवाही से पहले मध्यस्थता पर विचार करें।
8. व्यापार स्थापित करने से पूर्व लाभ का मूल्यांकन करें।

उष्ट्र के चमड़े के गुण

राजेश कुमार सावल

निदेशक

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

ऊँट रेत से भरे रेगिस्तानों की कल्पना को व्यक्त कर सकता है जोकि कोई अन्य पशु नहीं कर पाता, जहाँ बालू के टीले लहराते हैं, वहाँ पानी कम है, वनस्पति भी दुर्लभ है, और जीवन कठिन है। ऊँट, जैसा कि आप जानते हैं, ऐसे ही जीवन के लिए बनाए गए हैं। विकास की सदियों में, इस जानवर ने अपने शरीर को एकदम सही रेगिस्तान मशीन – उसके पैरों, उसकी आँखों और कानों, उसकी पीठ पर कूबड़ के रूप में सम्मानित किया है। जानवर के शरीर का हर हिस्सा बेहद कठोर जलवायु परिस्थितियों का सामना करने के लिए अनुकूलित है।

गौवंश की तुलना में उष्ट्र चमड़े में 10 रेशे प्रति वर्ग सेंटीमीटर होते हैं, जो और पशुओं की तुलना में इसे चरम वातावरण को फटने से बचाने में मदद करता है। यह रेशे परंपरागत रूप से ऊँट में अधिक होते हैं, जो चरम वातावरण में जानवर की रक्षा करने में मदद करता है। परंपरागत रूप से मानव के इस्तेमाल के लिए उष्ट्र चमड़े से विभिन्न वस्तुएं बनाई जा सकती है। इस प्रकार ऊँट के चमड़े के थैले के स्थायित्व पर अधिक भरोसा किया जा सकता है। इसके अलावा, यह नरम और चिकना होता है। ऊँट के चमड़े के खराब होने की संभावना कम होती है। ऊँट के चमड़े के बैग को अन्य चमड़ों के बराबर माना गया है।

ऊँट के चमड़े से बने उत्पाद किसे खरीदना चाहिए : ऊँट का चमड़ा मुख्य रूप से दो चीजों के लिए जाना जाता है पहला इसकी अद्वितीय तन्यता ताकत और दूसरा खूबसूरती से तैयार उत्पाद पर इसका आकर्षक अनाज पैटर्न। यदि आप इनमें से किसी एक की तलाश कर रहे हैं, तो इसको प्राथमिकता दें। ऊँट का चमड़ा पतला और लचीला होता है। यह पारंपरिक कमाना तरीकों के बजाय स्थायित्व को आधुनिक रूप से बढ़ाया जा सकता है।

ऊँट–कठिनता के लिए निर्मित जीव है, यह कठिन परिस्थितियों का सामना करने के लिए इसकी त्वचा भी विशिष्ट रूप से अनुकूलित होती है। एक कठिन छिपाना कई लोगों के लिए एक वांछनीय गुण हो सकता है। यह उष्ट्र की एक वास्तविकता है।

उष्ट्र चमड़ा एकत्र करने में कठिनाइयाँ: कुछ पशु जंगल में मर जाते हैं व कुछ रेत के धोरों पर, ऐसे में उनकी खाल निकलना संभव नहीं हो पाता। इसके अतिरिक्त ऊँट पालकों में उष्ट्र चमड़े के प्रति कम दिलचस्पी लेने से खालों को इकट्ठा करना भी मुश्किल हो जाता है। चमड़े प्रसंस्करण का कार्य मुख्यता बड़े शहरों में होता है जहाँ तक उसे उठा कर ले जाने में समय व वित्तीय संसाधन की आवश्यकता पड़ती है, जिस कारण से ऊँट पालक इस कार्य हेतु कम दिलचस्पी लेते है जबकि उष्ट्र चमड़ा एक महत्वपूर्ण संसाधन है जो ऊँट पालकों के आय के लिए योगदान दे सकता हैं।

रंग–केवल कैमरा नहीं है : ऊँट अपने नाम को एक रंग के रूप में उधार देता है और वह शायद अपने चमड़े का "मूल" रंग है। फिर भी, आधुनिक टैनिंग तकनीकों में परिशोधन का मतलब है कि आप लगभग हर कल्पनीय रंग में ऊँट के चमड़े को पा सकते हैं जिसे आप चमड़े से जोड़ सकते हैं और कुछ रंग ऐसे भी हैं जिन्हें आप आमतौर पर चमड़े के साथ नहीं जोड़ते हैं जैसे चांदी और सुनहरे सहित जो कि उस्ता कला में बखूबी उभर कर आते हैं व उन आकृतिओं में जान डाल देते हैं।

उष्ट्र चमड़ा उत्पाद : ऊँट का चमड़ा, उन वस्तुओं के मामले में काफी बहुमुखी है, जिन्हें इससे निकाला जा सकता है। चमड़े की जैकेट, हैंडबैग, पर्स, जूते, आईफोन कवर, रोज़मर्रा की आवश्यक वस्तुएँ, कार असबाब इत्यादि ऊँट के चमड़े का उपयोग इसके लिए किया जा सकता

है। प्रस्तुत करना शायद एकमात्र उपयोग है इस कारण ऊँट चमड़े को अनुकूलित करने के लिए थोड़ा मुश्किल हो सकता है क्योंकि ऊँट की प्रकृति को देखते हुए उनका चमड़ा गौवंश की खाल से छोटे होता हैं।

सभी खाल का एक ही प्रक्रिया के माध्यम से प्रसंस्करण किया जाता है जिसमें उनकों भिगोना, सीमित करना, सतह को साफ करना, और अपशिष्ट भाग को साफ करना ताकि उस पर परजीवी न लगे व गुणवता लाई जा सके।

चुनौतियाँ एवं अवसर : सबसे बड़ी चुनौती उष्ट्र के चमड़े की उपलब्धता है। चूँकि ऊँट के चमड़े में ऐसे गुण होते हैं जो इसे कई उपयोगों के लिए परिपूर्ण बनाते हैं। फिर भी, यह अधिकांश फैशन प्रदर्शिनियों में कम प्रदर्शित किये जाते हैं।

जबकि अधिकांश चमड़े के प्रेमी ऊँट के चमड़े को विदेशी कहते हैं, इसलिए इसे विलास और प्रतिष्ठा के साथ नहीं जोड़ सकता है। इसे सावधानी पूर्वक और निरंतर विपणन अभियान द्वारा व्यवसाय चलाया जा सकता है और स्वत रोज़गार के रूप में अपनाया जा सकता है।

"मैं दुनिया की सब भाषाओं की इज्जत करता हूँ, परन्तु मेरे देश में हिंदी की इज्जत न हो, यह मैं नहीं सह सकता।"
- विनोबा भावे

कृषि और पशुपालन संबंधित विभिन्न उपयोगी मोबाइल एप्प

वेद प्रकाश[1], बसंती ज्योत्सना[1], गजानन्द[2], नेमीचंद बारासा[3], एवं आर.के. सावल[4],
[1]वैज्ञानिक, [2]पर्यवेक्षक, [3]सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी, [4]निदेशक
[1,2,3,4]भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

सूचना एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में मोबाइल ने मानों एक क्रांति उत्पन्न कर दी है। आज हर उम्र का एवं हर स्तर का व्यक्ति मोबाइल से जुड़ा हुआ है तथा इस तकनीकी का इस्तेमाल कर अपने कार्यों को और अधिक आसान बना रहा है। मोबाइल ने संपूर्ण दुनिया को अपने में समाहित कर लिया है। आज कोई भी जानकारी तत्क्षण प्राप्त की जा सकती है। ऐसे में मोबाइल कृषि और पशुपालन के क्षेत्र में भी प्रगति के द्वार खुल गए हैं। भारत कृषि प्रधान देश है और देश के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि एवं पशुपालन का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। आधुनिक युग में किसान व पशुपालक मोबाइल एप्प तकनीकी से जुड़कर और अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। वर्तमान में चलाए जा रहे कुछ मोबाइल एप्प निम्नलिखित हैं–

ई मौसम एच ए यू कृषि मौसम सेवा (E mausam HAU Krishi Mausam Seva)

- यह एप्प सी सी एस हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार द्वारा विकसित किया गया हैं।
- इसमें जिलेवार कृषि से संबंधित मौसम पूर्वानुमान, वर्तमान मौसम, मौसम आधारित फसल सलाह और फसल पैकेज की जानकारी होती है।
- यह कृषि के कुशल प्रबंधन और कृषि उत्पादकता में वृद्धि के साथ असामान्य मौसम से खेतो के नुकसान को कम करने के कारणों की जानकारी प्रदान करता है।
- यह मौसम की अनियमितताओं के कारण खेतो के नुकसान को कम करने, कृषि में इनपुट लागत को कम कर लाभ में वृद्धि और प्रबंधन द्वारा उत्पादकता में वृद्धि की जानकारी प्रदान करता है
- यह एप्प हिंदी भाषा में है।
- Google Play store पर उपलब्ध है। वेव पताः– https://play.google.com/store/

खेती ज्ञान एप्प (Kheti Gyan app)

यह एप्प कृषि विज्ञान केन्द्र जलान्धर पंजाब के द्वारा 2017 में विकसित किया गया है।

- इसके ऑफलाइन मोड की सुविधाओं में फोटोग्राफी, प्रमुख फसल की जानकारी और खेत में काम आने वाली मशीनरी की जानकारी शामिल है।
- यह एग्रीमार्केट मोबाइल एप्प के साथ जुड़ा हुआ है जिससे किसान विभिन्न फसलो का बाजार मूल्य जांच कर सकता है।
- यह एप्प अग्रेजी और पंजाबी भाषा में है।
- कृषि विज्ञान केन्द्र जलांधर की वेबसाइट और गूगल प्ले स्टोर पर एप्प उपलब्ध हैं। http://www.kvkjalandhar.com/khetigyan.php https://play.google.com/store/

फार्म कैलकुलेटर्स (Farm Calculators)

- यह एप्प कृषि विश्वविद्यालय बेंगलुरू कर्नाटक द्वारा 2015 में विकसित किया गया है।
- यह एप्प फसल में बीज की सटीक मात्रा व उर्वरको के लिये उपयोगी है।
- यह एप्प अग्रेजी, हिंदी, कन्नड, तमिल, तेलगु, मराठी, बगाली और गुजराती भाषाओं में है।
- यह एप्प Google play store पर उपलब्ध है। https://play.google.com/store/

पशुपालन एपीके (Pashupalan APK)

यह एप्प लाला लाजपत राय विश्वविद्यालय पशुचिकित्सा और पशुविज्ञान हिसार हरियाणा द्वारा 2014 में विकसित किया गया है।

- यह एप्प गाय, भैस, भेड़, बकरी की नस्लों, आवास प्रबधन, पोषण प्रबंधन, प्रजनन प्रबंधन, कृत्रिम गर्भाधान, ताव में आने के सकेंत, विभिन्न रोगों के संकेत, रोकथाम और नियंत्रण, टीकाकरण, साफ दुग्ध उत्पादन और डेयरी के बारे में जानकारी देता है।
- यह एप्प हिंदी भाषा में है।
- यह विश्वविद्यालय की वेबसाइट और गूगल प्ले स्टोर पर उपलब्ध है।

http://www.luvas.edu.in/e-pashu-palan.zip

लाइवस्ट्रोक डीजीज फारकास्टिंग एलडीएफ एप्प (LDF APP-(Livestock Disease Forewarnig)

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय महामारी विज्ञान और रोग सुचना विज्ञान संस्थान, बेंगलुरू, कर्नाटक द्वारा 2017 में विकसित किया गया।

- इस एप्प में प्रयोगशाला के लिये सूचिबद्ध रोग के प्रकोप के पुष्टि के मामले में एकत्रित नैदानिक नमूने की सुविधाओं का ऑफलाइन विवरण शामिल है ।
- यह एप्प सकारात्मक भविष्यवाणी कर रोगो की पुष्टि कर उनका तत्काल निवारण करने की सुविधा प्रदान करता है।
- यह एप्प NIVEDI (निवेदी) की वेबसाइट पर उपलब्ध है।

http://www.nivedi.res.in/

हुफ केयर (Hoof Care)

यह एप्प पशु चिकित्सा और पशुविज्ञान विश्वविद्यालय वायनंद, केरल द्वारा 2017 में विकसित किया गया है।

- अधिक उत्पादन के लिये खुर को बनाये रखंना, स्वास्थ्य के लिये छिड़काव करना आदि सुविधाऐं एप में शामिल है।
- किसान उत्पादकता का अनुमान लगा सकता है।
- यह एप अंग्रेजी भाषा में है।
- यह एप विश्वविद्यालय की वेबसाइट और गुगल प्ले स्टोर पर उपल्बध है।

कैटल डेंटिसन (Cattle Dentition)

यह एप पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, वायनंद, केरल द्वारा 2017 में विकसित किया गया है।

- इस एप्प में ऐसी जानकारी जो किसानों के द्वारा गाय, बकरी कुत्ता आदि जानवरों को खरीद करते समय सहयोगी हो शामिल है।
- यह एक शैक्षणिक एप्प है जो कि पशुओं की उम्र और दांत के बारे में जानकारी प्रदान करता है। यह विश्वविद्यालय की वेबसाइट पर उपलब्ध है।

Website: www.kvasuleap.in

फीड कैलकुलेटर (Feed Calculator)

यह एप्प पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय तमिलनाडु द्वारा 2017 में विकसित किया गया है।

- यह एप्प पशु के आवश्यक फीड की गणना, उम्र के आधार पर, दुग्ध उत्पादन क्षमता तथा दूध में वसा प्रतिशत आदि के आधार पर करता है। यह एप्प अग्रेजी और तमिल भाषा में है। यह एप्प गुगल प्ले स्टोर पर उपलब्ध है।

https://play.google.com/store/

इको डायरी (Ecodairy)

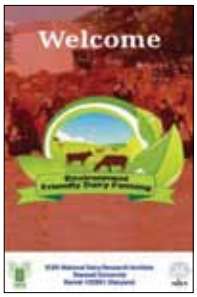

यह एप्प आईसीआर – नेशनल डेयरी रिसर्च इंस्टीट्यूट, करनाल हरियाणा द्वारा 2017 में विकसित किया गया है।

- इस एप्प में त्वरित जवाब, प्रश्नों और किसी अन्य जानकारी जैसे वर्तमान पर्यावरण, दोस्ताना डेयरी, खेती, पशु प्रजनन, भोजन, स्वास्थ्य देखभाल और प्रंबधन शामिल है।

- यह एप्प हिंदी और अग्रेजी भाषा में है।
- यह एप्प एनडीआरआई की वेबसाइट पर उपलब्ध है। http://www.ndri.res.in/

ICAR-NIANP Feed Chart (भा.कृ.अनु.प. एन.आई.ए.एन.पी. फीड चार्ट)

यह एप्प भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय पशु पोशण और फिजियोलॉजी संस्थान बेंगलुरू, कर्नाटक द्वारा 2018 में विकसित किया गया है।

- इस एप्प में क्रॉसब्रीड दुधारू गायों और भैंसो के लिए राशन देने की सुविधाओं को शामिल किया गया है।
- यह एप्प किसान को क्रॉस ब्रिड मवेशियो व भारतीय भैंसों के विभन्न आयु वर्गो तथा विभिन्न शारीरिक जरूरतों के अनुसार राशन की मात्रा एवं प्रकार की गणना में दिशानिर्देश देता है। यह एप्प हिंदी, अग्रेजी, तमिल और तेलगु भाषा में है।
- यह एप्प वेबसाइट और गूगल प्ले स्टोर पर उपलब्ध है।
- वेबसाइटः http://14.139.158.230/feedchart

ICAR-CIRB Bhains Janan (Buffalo Reproduction) App (भा.कृ.अनु.प. सी.आई.आर.बी. भैंस जनन एप्प)

भैंस प्रजनन एक शैक्षिक मोबाइल एप्प है। जिसे भा.कृ.अनु.प. सी.आई.आर.बी. हिसार द्वारा डिजाइन किया गया है। जो भैस मालिकों के लिए भैंस पालन संबंधित ज्ञान प्रदान करता है और पशुधन सहायक और पशु चिकित्सकों को स्नातक करने के लिए मार्गदर्शक भी है। एप्प अक्सर पुछे जाने वाले प्रश्नों और उत्तरों के साथ पूरी सामग्री को सात अलग अलग खंडों में विभाजित करके भैंस के प्रजनन के विभिन्न क्षेत्रों पर बुनियादी जानकारी प्रदान करता है। इस एप्प में भैंस में पाए जाने वाली ग्यारह प्रमुख प्रजनन समस्याओं पर विशेष ध्यान दिया गया है, इसमे प्रत्येक समस्या/विकार के कारणों, निवारण और नियंत्रण के उपायों पर जोर दिया गया है।

यह एप्प वर्तमान में हिंदी और अग्रेजी भाषाओं में उपलब्ध है। संपूर्ण एप्प सामग्री में डाउनलोड सूविधा के साथ ऑडियो बैकअप है।

आम की सुरक्षा

आम (मैगीफेरा इंडिका) दुनिया में महत्वपूर्ण वाणिज्यिक फल पेड़ फसलो में से एक है। यह उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय जलवायु में उगाया जाता है। यह साइट्रस फल के बाद सबसे अधिक उत्पादन वाला फल हैं। भारत 15 मिलियन मीट्रिक टन के अनुमानित उत्पादन के साथ आम का अग्रणी निर्माता है। आम –सुरक्षा एप्प पूर्वी क्षेत्र के लिये आईसीएआर–रिसर्च कॉम्प्लेक्स, पटना द्वारा विकसित किया गया एक मोबाइल एप्प है जो पूर्वी पठार और भारत के पहाड़ी क्षेत्र में खेती में आम कीट और कीट प्रंबधन प्रथाओं इत्यादि की जानकारी किसानों, वैज्ञानिकों और विकास अधिकारियों को प्रदान करता है ।

Developer-ICAR-RRCER-PATNA

Visit website: directoricarrcer@gmail.com

FEM@Mobile (Farm extension Manager)

एफ.इ.एम.@मोबाइल (फार्म इक्सटेंशन मेनेजर)

एफ इ एम मोबाइल एप्प फसलों पर जानकारी यूक्त कृषि प्रबंधन के लिए बनाया गया है। इसको इस प्रकार डिजायन किया गया है कि यह छोटे और बड़े किसानो की जरूरत का ख्याल रखता हैं। एप्प के अंतर्गत शामिल की गई जानकारियों की छः विभिन्न श्रेणियां है। जिसमें फसल की खेती, पौध संरक्षण, जैविक निविष्टियां, एग्रो केमिकल्स, विशेषज्ञ सहायता और संपर्क निर्देशिका है।

फसलों को मसालों, सब्जियों, औषधीय पादपो आदि जैसे व्यापक समूहो के आधार पर वर्गीकृत कर, फसल उत्पादन के विभिन्न पहलुओं की देखभाल और फसल के बाद रोपण, विविध उर्वरक के बारे के बारे में जानकारी रोपण कार्य पर बीज सामग्री, रिक्ति, रोपण समय, आदि के बारे में जानकारी देता है। लगभग 300 उर्वरक सिफारिशों को सीधे उर्वरक स्वरूप में और इकाई क्षेत्र में प्रति पौधा का आधार उर्वरक सूचना स्पष्ट कर देता है कि कितना उर्वरक दिया जाए, कब और कैसे दिया जाये। मोबाइल एप्लीकेशन के दो फायदे है। सबसे पहले यह विस्तार अधिकारियो के लिये एक क्षमता निर्माण उपकरण के रूप में कार्य करता है। इससे किसी भी समय अपने ज्ञान को ताजा कर सकते है। दूसरा यह प्रोद्योगिकी के हस्तांतरण में शामिल लागत, समय और स्थान संबंधी समस्याओं को कम करता है। यह दुरदराज के स्थान पर स्थित छोटे और सीमांत किसानों के लिये विशेष महत्व रखती है।

Visit website- drishti.agri@gmail.com

आईसीएआर-काजरी कृषि

आईसीएआर–काजरी जोधपुर शुष्क कृषि में अग्रणी संस्थान है। काजरी कृषि एक द्विभाषी मोबाइल एप्प है जो विस्तारित ज्ञान और विकसित प्रौद्योगिकियों के साथ क्षेत्र के विकास को सुदृढ़ करने के लिये की गई पहल है। इसके द्व ारा किसानों को मौसम, एग्रो सलाह, फसल पशुपालन, पौध सरक्षण, फार्म शुरू करने और सौर उपकरणों के बारे में जानकारी मिल सकती है।

Visit website- jovialconnection@gmail.com

चना मित्र

आईसीएआर–भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर (उ.प्र.) द्वारा यह एप्प बनाया गया है। यह एप्लिकेशन फसल उत्पादन, कीट और रोगों के प्रबंधन के लिए फसल संरक्षण, फसल प्रौद्योगिकियों तथा बाजार मूल्य से संबंधित जानकारी प्रदान करता है। यह शोधकर्ताओं की एक मजबूत टीम द्वारा तैयार किया गया है। तारीखों से सबंधित प्रश्नों के समाधान प्रदान करता है।

Visit website- chanamitra.developer@gmail.com

IVRI ANIMAL REPRODUCTION (एनिमल रिप्रोडक्शन)

यह ICAR-IVRI, इज्जतनगर द्वारा डिजाइन किया गया है। यह नवीन एवं पशु प्रजनन अनुप्रयोग, प्रजनन के बारे में पशुचिकित्सा अधिकारियों और पशुधन उद्यमियों के ज्ञान और कार्य प्रदान करने के लिए लक्षित है। एप्लिकेशन इसके अतिरिक्त मवेशी और भैंसो में कृत्रिम गर्भाधान पर बुनियादी जानकारी प्रदान करता है।

Visit website- support.ivriapps@icar.gov.in

ARTIFICIAL INSEMINATION (आर्टीफिशियल इन्सेमीनेशन)

Visit website- support.ivriapps@icar.gov.in

यह एप्प भी आई.वी.आर.आई. द्वारा विकसित की गई है जो कृत्रिम गर्भधारण संबंधित जानकारी उपलब्ध कराता है।

PIG FARMING AAP (पिग फार्मिंग एप्प)

Visit website- support.ivriapps@icar.gov.in

इसे भी आई.वी.आर.आई. बरेली द्वारा बनाया गया है। यह एप्प सुअर खेती के बारे में जानकारी देता है। यह एप्प वर्तमान में हिंदी और पंजाबी भाषाओं में उपलब्ध है।

Infoequine by ICAR-NRCE (इन्फो इक्वाईन बाई एन.आर.सी.ई.)

Visit website- https://www.detaintech.in

यह द्विभाषीय मोबाइल एप्प भा.कृ.अनु.प. राष्ट्रीय अश्व अनुसंधान केंद्र, हिसार द्वारा विकसित किया गया है। यह एप्प हिन्दी एवं अंग्रेजी भाषाओं में उपलब्ध है। यह एप्प अश्व पालकों, पशु–चिकित्सकों, पशु पालन के अधिकारियों, विद्यार्थियों के लिए उपयोगी है। यह एप्प उपयोगकर्ता को अश्व पालन के विभिन्न आयाम जैसे नस्ल, प्रबंधन, पोषण, बीमारियाँ, कृत्रिम गर्भधारण, गर्भावस्था की पहचान इत्यादि जानकारियां प्रदान करता है। इसके अलावा यह एप्प घोडो से संबंधित जानकारियां जैसे रोग पहचान केंद्रों, कृत्रिम गर्भधारण केंद्रो, संस्थान द्वारा विकसित तकनीक एवं उत्तम गुणवत्ता के घोड़े, गधे एवं गधे के वीर्य उत्पादन के स्त्रोत की जानकारी देता है।

Feed Guide APP (फीड गाईड एप्प)

Visit website- angadiub@gmail.com

यह एक मोबाइल एप्प है जो डेयरी पशुओं के राशन निर्माण में मदद करता है। इस एप्प के द्वारा पशुपालक विभिन्न आयुवर्गो एवं उत्पादन वाली गायों एवं भैसों के लिए कम लागत में उचित राशन तैयार कर सकते है। यह कइ भाषाओं में उपलब्ध है।

Pashu Poshan app (पशु पोषण एप्प)

एनडीडीबी ने एक एंड्रोइड आधारित सॉफ्टवेयर विकसित किया गया है जिसका उपयोग फोन के साथ साथ टैबलेट पर भी किया जा सकता है। इस साफ्टवेयर की सहायता से संतुलित राशन तैयार किया जाता हैं। पशु प्रोफाइल यानी गाय, भैसों की उत्पादन क्षमता, दूध की वसा और भोजन व्यवस्था आदि पर विचार करने के लिए, लागत को अनुकूलित करते हुये दूध उत्पादकों को स्थानीय रूप से उपलब्ध खाद्य सामग्री की मात्रा समायोजित करने की सलाह दी जाती है।

Visit website- anand@nddb.coop

"किसी भाषा की उन्नति का पता उसमें प्रकाशित हुई पुस्तकों की संख्या तथा उनके विषय के महत्व से जाना जा सकता है।"
- गंगाप्रसाद अग्निहोत्री

पशुओं में नेतृत्व क्षमताः थार रेगिस्तान में ऊँट पर अध्ययन

विनोद कुमार यादव[1], आर.के. सावल[2], राधाकृष्ण वर्मा[3], एवं शिल्पा यादव[4]

[1]तकनीकी सहायक, [2]निदेशक, [3]तकनीकी अधिकारी, [4]सहायक आचार्य

[1,2,3]भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

[4]राजकीय डूंगर महाविद्यालय, बीकानेर

नेतृत्व जीवों का एक मूलभूत गुण है। चाहे वो जानवर हो या फिर इंसान। इसके साथ ही हर जीव नेता बनना चाहता है क्योंकि नेतृत्व मायने रखता है तथा नेतृत्व करने के अनेक फायदे है मसलन उसे खाने के अधिक अवसर मिलते है, उसे अनेक मादाओं का साथ मिलता है साथ ही हर कोई उसका अनुसरण करता है। नेतृत्व करने की यह प्रकृति मुख्यतया जंगली जानवरों में मिलती है क्योंकि पालतू जानवरों में यह गुण कम देखने को मिलता है क्यूंकि पालतू जानवर को आसानी से खाना तथा सुरक्षा मिल जाती है जिससे यह गुण धीरे–धीरे लुप्त हो गया या निष्क्रिय हो गया।

नेतृत्व कौशल एक स्किल सेट है जिसे मनुष्यों और जानवरों दोनों में देखा जा सकता है। जानवरों में जो समूहों में रहते हैं, कुछ जानवर नेता हैं और अन्य अनुयायी हैं। नेतृत्व में भिन्नता सहज रूप से विकसित होती है और ज्ञान या शक्ति में अंतर से संबंधित होने की आवश्यकता नहीं है। सामाजिक जानवरों को एक दुविधा का सामना करना पड़ता है। समूह में रहने वाले लाभों का लाभ उठाने के लिए, उन्हें एक साथ रहना होता है। हालांकि, हर एक जीव अपनी प्राथमिकताओं में भिन्न होते हैं जैसे कहां जाना है और आगे क्या करना है। यदि सभी जीव अपनी–अपनी प्राथमिकताओं का पालन करने लगे, तो समूह जुटना कम हो जायेगा, तथा समूह के फायदे नहीं मिलेंगे। इसलिए अपनी स्वयं की वरीयताओं की उपेक्षा करना और एक नेता का अनुसरण करना इस समन्वय समस्या को हल करने का एक तरीका होता है जिसका समूह में रहने वाले जीव अनुसरण करते है। लेकिन वो कोनसी विशेषताएँ है जो किसी को 'लीडर' बनाती हैं?

कुछ खास विशेषताएँ कुछ जानवरों को नेता बनाती हैं जैसे शारीरिक रूप से मजबूत, मज़बूत माता–पिता की संतान होना, जवान होना आदि। पशु अपने समूहों को प्रभावित करके नेतृत्व करते हैं, उनका मार्गदर्शन करते हैं और अपने अनुयायियों से लगातार संवाद करते हैं और अपने अनुयायियों के लिए लक्ष्य निर्धारित करते हैं तथा लक्ष्य का पालन करवाते हैं। उनमें से बहुत कम हैं जिनके पास पर्याप्त जानकारी हो, जैसे कि खाद्य स्रोत के स्थान के बारे में ज्ञान, या प्रवासन मार्ग, और इसलिए एक समूह में हमेशा एक नेता होता है जो सभी जानकारी जानता है और इस प्रकार अपने अनुयायियों को सही दिशा में निर्देशित करता है। यह नेता वह है जो अपने अनुयायियों (उनकी देखभाल) की सुरक्षा की जिम्मेदारी लेता है और बदले में, अनुयायी अपने नेता पर निर्भर हैं।

एक नेता को उसके विश्लेषणात्मक कौशल और सामाजिक या पारस्परिक कौशल का पूरा उपयोग करना चाहिए। नेता को उदाहरणों, कार्यों से आगे बढ़ना होता है क्यूंकि नेता बने रहने के लिए लगातार प्रदर्शन करने होते हैं।

पालतू जानवरों में नेतृत्व क्षमता पर बहुत कम अध्ययन हुआ है, तथा ऊँट में नेतृत्व क्षमता के बारे में ऐसा कोई विशेष अध्ययन नहीं मिलता है। ऊँट एक पालतू जानवर है

चित्र– एक मादा ऊँट द्वारा उष्ट्र समूह का नेतृत्व

लेकिन पुराने समय में यह एक जंगली जानवर था जिसको इंसान ने अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पालतू बना लिया, लेकिन आज भी इसमें अपने समूह में रहने तथा उस समूह का नेतृत्व, एक नेता के द्वारा किये जाने के गुण का पता करने के लिए सितम्बर 2018 से फरवरी 2019 तक हर दिन ऊँटों के समूह का वैज्ञानिक तरीके से निरीक्षण किया गया तथा यह पाया गया की ऊँटों के समूह में, खाने की खोज, रास्ते का निर्धारण, समूह के चलने की गति, तथा समूह को बनाये रखने के लिए उचित नेतृत्व पाया जाता है जो प्रमुखतया मजबूत कद–काठी की जवान मादा या नर द्वारा किया जाता है, मादाओं में नेतृत्व करने की क्षमता अधिक पायी जाती है। उपरोक्त अध्ययन ऊँटों के व्यवहार संबंधी अध्ययन विशेषकर नेतृत्व तथा समूह के अध्ययन के लिए आधारभूत अध्ययन हो सकता है। साथ ही ऐसा कहा जाता है की मध्य एशिया में प्राचीन काल में व्यापारी रास्ते की खोज करने के लिए ऊँट की याददाश्त क्षमता को काम में लेते थे, जो ऊँटों में नेतृत्व क्षमता की बात को बल देता है।

"जीवन के छोटे से छोटे क्षेत्र में हिंदी अपना दायित्व निभाने में समर्थ है।"
- पुरुषोत्तमदास टंडन

पर्यावरण संरक्षण और भारतीय चिंतन

गौरव बिस्सा
सह आचार्य
राजकीय अभियांत्रिकी महाविद्यालय बीकानेर

प्राचीन ग्रंथों में छिपे हैं पर्यावरण संरक्षण सिद्धांत

घास का तिनका कैसे उगता है ? एक सात वर्षीय बालक को इसका उत्तर देना विद्वानों के लिए भी मुश्किल है. एक घास के तिनके को उगाने के लिए पूरी सृष्टि अपना अतुलनीय योगदान देती है। मिट्टी या पृथ्वी में फूटा अंकुर, जल से सिंचित होकर सूर्य की रोशनी से परिपक्व होता अंकुर, प्राणवायु के सहयोग से आकाश की ओर बढ़ता है। समूचे पञ्च महाभूतों के योगदान से एक तिनका उगता है। इस एक तिनके को अनुपम ईश्वरीय कृति मानकर उसका संरक्षण करना ही हमारे राष्ट्र जीवन की परंपरा है। जब सभी देवताओं की अनुपम कृति एक पौधा है। उसका फल अर्थात अन्न का एक दाना ईश्वरीय अंश है, देव तुल्य है और यही हमारे देश की थाती है। ऋग्वेद में समूचे जगत और पर्यावरण के संतुलन का दायित्व मित्र, वरुण, इंद्र, मरुत और आदित्य आदि देवों का माना गया है।

पर्यावरण का प्रभावी संरक्षण और उसे कदापि हानि न पहुंचाने का सम्पूर्ण विवरण हमारे प्राचीन ग्रंथों में समझाया गया है। ऋग्वेद का सन्देश है " मित्रस्यहम चक्षुषा सर्वानि भूतानि समीक्षे" अर्थात् हम प्रकृति की समूची कृतियों को मित्र की दृष्टि से देखें। ऋग्वेद में अश्विन से प्रार्थना में उनका आभार जताते हुए कहा गया है कि है कि हमें सूर्य की अत्यंत घातक हानिकारक किरणों तथा ताप से बचाने हेतु आपने जो संरक्षण प्रदान किया उसके हम ऋणी हैं। यह वर्तमान ओजोन परत के सिद्धांत से जुड़ता प्रतीत होता है। चारों वेदों में मनुष्यों द्वारा प्रकृति से की गयी छेड़छाड़ के कारण बिगड़ते ऋतु चक्र का वर्णन है।

अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त में "माँ भूमिः पुत्रोहम पृथ्वियाः" अर्थात मैं पृथ्वी माता का पुत्र हूँ और समस्त वन और वनस्पति माता का उपहार है। पर्वतों के संरक्षण, जल के विवेकपूर्ण उपयोग, मृदा संरक्षण पर वेदों में प्रार्थनाएं हैं।

पंचवटी रखेगी सभी को निरोग

भगवान श्रीराम ने वनवास के चौदह वर्ष पूर्ण स्वस्थ और नीरोग रहते हुए बिताये। इसका मूल मन्त्र भी पर्यावरण के वैज्ञानिक सिद्धांतों की श्रेष्ठ क्रियान्विति थी। भगवान श्रीराम अपने चौदह वर्ष के वनवास में काफी समय पंचवटी में रहे। स्कन्द (स्कन्न) पुराण के हिमाद्रीय व्रत खंड के अनुसार पंचवटी अर्थात सुनिश्चित दूरी पर लगाए गए पांच वृक्षों का समूह है. पंचवटी का विशिष्ट वैज्ञानिक, औषधीय और पौराणिक महत्त्व है. पूर्व दिशा में पीपल, पश्चिम दिशा में बरगद, दक्षिण दिशा में आंवला, उत्तर दिशा में बेल और दक्षिण–पूर्व दिशा में अशोक के वृक्ष लगाने की वैज्ञानिक क्रिया ही पंचवटी है. सेन्ट्रल ड्रग रिसर्च इंस्टिट्यूट के शोध के अनुसार :

- पीपल 1800 किलोग्राम ऑक्सीजन प्रति घंटे की दर से उत्सर्जन करता है।
- बरगद प्राकृतिक वातानुकूलन (एयर कंडिशनर) के रूप में कार्य करता है।
- विटामिन सी से भरपूर आंवला रोग प्रतिरोधक क्षमता बढाता है।
- बेल पाचन तंत्र सुधारता है।
- अशोक वृक्ष महिलाओं को नीरोग रखता है।

प्राचीन इतिहास में पर्यावरण संरक्षण सन्देश : राजा परिवल्लाल की कथा

पर्यावरण प्रेम का सर्वोकृष्ट उदाहरण हमारे प्राचीन इतिहास में चोल राजा परिवल्लाल का है. राजा परिवल्लाल अपने कुशल नेतृत्व, पारदर्शिता और बेहतरीन निर्णय क्षमता हेतु विख्यात थे. एक दिन वन में अपने रथ को एक स्थान पर छोड़ कर किसी सन्यासी से मिलने पहुंचे. वापस लौटने पर उन्होंने देखा कि दो छोटी लताएं (बेल) उनके रथ के पहिये से सर्पिलाकार आकार में जुड़ गई. रथ चलने से दोनों लताएं टूट जाती. राजा परिवल्लाल रथ वहीं छोड़कर,

वहां से पैदल लौटे। उन्होंने सारथी से कहा कि वृक्ष, फूल और लताएं ईश्वर का अंश हैं, जीवन देने वाली संपत्ति हैं और इनका संरक्षण प्रत्येक राजा का कर्तव्य है। यह निर्णय सही है या नहीं, मूल बात ये नहीं है। मूल विषय राजा परिवल्लाल का पर्यावरण प्रेम, कर्तव्यपरायणता और संस्कार है जो हमें सोच की नई दिशा देता है। यह घटना हमारे राष्ट्र नायक की सोच और दूरदृष्टि को दर्शाती है.

सस्टेनेबल डेवलपमेंट : हमारे राष्ट्र जीवन की परम्परा

पर्यावरण संरक्षण के साथ सस्टेनेबल डेवलपमेंट (संपोषणीय विकास) की चर्चा वर्तमान में होती रही है। सस्टेनेबल डेवलपमेंट का उद्भव और विकास भारत में ही हुआ है. हमारे गौरवशाली देश ने कभी भी भोगवादी संस्कृति को श्रेष्ठ नहीं माना. "तेन तक्तेन भुंजीथा" अर्थात् प्रत्येक वस्तु का त्यागपूर्वक उपभोग करना हमारे देश की परंपरा है। "जितना मुझे चाहिये, मैं प्रकृति से उतना ही लूं और शेष प्रकृति को लौटा दूं"। यह हमारी जीवन शैली है। वर्तमान भौतिक युग में उपभोक्तावाद की संस्कृति हावी है जो अत्यधिक मात्रा में संग्रहण, अथाह धन के खर्च, आवश्यक ना होने पर भी खरीद और बिना बात ही पुरानी वस्तु को त्याग नई वस्तु खरीदने को प्रेरित करती है। ऐसा करने पर पुरानी वस्तुओं का कबाड़ इकठ्ठा होता जाता है, उनके निर्माण में लगा श्रम व्यर्थ जाता है और पर्यावरण को हानि होती है। हमारी वैदिक संस्कृति "अपरिग्रह" अर्थात आवश्यकता से अधिक का संग्रह न करने और जितना प्राप्त हो, उससे ज्यादा लौटाने में विश्वास करती है।

इसे समझिये! आपके पास एक मोबाइल है, ठीक चल रहा है। आपने विज्ञापनों के प्रभाव या स्टेटस सिम्बल के चलते उसे रखकर नया मोबाइल ले लिया। अब पुराने मोबाइल का क्या ? उसे बनाने में, उसकी तकनीक विकसित करने में, हजारों लोगों का श्रम लगा था। आपने एक पल में ही इसे त्याग दिया। अब वो मोबाईल कबाड़ है। यह पाश्चात्य सभ्यता है। इसे छोड़ने की प्रेरणा भारतीय शास्त्र नहीं देता है।

वृक्षों से सीखें जीवन का मैनेजमेंट

हमारे देश में तो सदैव वृक्षों से जीवन प्रबंध सीखने की बात कही गयी है। मनुष्यों को वृक्षों की मति अर्थात् सीख लेने को कहा गया है।

- जितना बड़ा वृक्ष उतनी ज्यादा छाया अर्थात समाज में उच्च स्थान मिल जाने पर भी जगत कल्याण का भाव।
- वृक्ष सभी को सामान छाया देता है और लिंग, जाति, सम्प्रदाय से परे है। मनुष्य भी परोपकारी भाव से सभी का हित करे।
- वृक्ष पर जितने ज्यादा फल उतना ही नीचे की ओर झुकाव अर्थात् अहंकार के भाव को त्यागना और समाज के अंतिम व्यक्ति का विकास।
- वृक्षों पर फलों के लिए मारे जाने वाले पत्थर का भी प्रेम से स्वागत कर मीठे फल देने की प्रकृति अर्थात निंदकों और आलोचकों का भी हित करने का भाव।
- वृक्षों द्वारा पतझड़ के बाद नए पत्तों का उगना अर्थात पुराने विचारों को त्यागकर नए और आधुनिक विचारों को जीवन में स्थान देना व रूढ़िवादी नहीं होना।

यही तो चेंज मैनेजमेंट है। यही तो जीवन का मर्म है। वृक्षों से सीख ले लेवें तो हमारा जीवन सफल होना निश्चित है।

वेद, पुराण, उपनिषद, ज्ञानी जन कुछ भी कहें और भले ही हमारी परम्परा गौरवशाली हो, इतना ही काफी नहीं है, मूल प्रश्न है क्रियान्विति। जरा सोचिये कि :

- क्या मैं पर्यावरण संरक्षण मिशन का हिस्सा बनना चाहता हूँ ?
- क्या मैं अपने आसपास के इलाके में वृक्षारोपण करूंगा और करवाऊंगा ?
- क्या मैं प्रतिवर्ष अपने जन्मदिन, विवाह वर्षगाँठ पर पौधा लगाऊंगा और उपहार स्वरुप दूंगा ?
- क्या मैं आवश्यकता से अधिक संग्रह नहीं करके महात्मा गांधी के सिद्धांतों का वाहक बनूँगा ?

यहाँ मन्त्र यही है कि यदि इन सभी पर हमारी सोच सकारात्मक है तो निश्चित रूप से हम प्रभावी संरक्षण कर अपनी आने वाली पीढ़ियों को सुन्दर पर्यावरण का तोहफा दे पायेंगे।

केन्द्र की राजभाषा गतिविधियाँ

हिन्दी पखवाड़ा-2017 का कार्यवृत्त

हिन्दी दिवस एवं हिन्दी पखवाड़ा मनाए जाने के संबंध में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली से प्राप्त पत्रांक 10(1)/2017–हिन्दी दिनांक 24 अगस्त 2017 की अनुपालना में भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर द्वारा दिनांक 14–28 सितम्बर, 17 तक हिन्दी पखवाड़ा मनाया गया। उपर्युक्त पत्र में वर्णित दिशा–निर्देशों पर अपेक्षित ध्यान देते हुए केन्द्र में इस पखवाड़े की अवधि के दौरान राजभाषा संबंधी विभिन्न गतिविधियां व कार्यक्रम आयोजित किए गए जिनमें केन्द्र के वैज्ञानिकों/अधिकारियों/कर्मचारियों ने उत्साहपूर्वक सहभागिता निभाते हुए हिन्दी पखवाड़ा–2017 को सफल बनाने में सहयोग प्रदान किया।

हिन्दी पखवाड़ा : उद्घाटन कार्यक्रम-14.09.2017

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र में दिनांक 14 सितम्बर, 2017 को हिन्दी पखवाड़े का विधिवत शुभारम्भ किया गया। इस अवसर पर केन्द्र के प्रधान वैज्ञानिक एवं कार्यक्रम अध्यक्ष डॉ. राजेश कुमार सावल ने कहा कि हिन्दी पखवाड़ा के तहत आयोजित सभी कार्यक्रम हिन्दी को वास्तविकता में बढ़ावा देने के लिए आयोजित किये जाते हैं। इनसे हमें हिन्दी में अधिकाधिक कार्य करने की प्रेरणा मिलती है। हिन्दी प्रयोग में सुधार लाने के लिए आवश्यकता इस बात की है कि इसमें काम करना शुरू कर दिया जाए। उन्होंने कहा कि अनुसंधान को सहज व सरल हिन्दी भाषा के माध्यम से ऊँट पालकों तक पहुंचाएं ताकि केन्द्र के अनुसंधानों की सार्थकता सिद्ध हो। डॉ. सावल ने अपनी स्वरचित कविताओं का वाचन भी किया।

प्रभारी राजभाषा डॉ. ए.के. नागपाल ने हिन्दी दिवस को परम्परा के रूप में मनाये जाने संबंधी जानकारी से सभा को अवगत करवाते हुए कहा कि आज बाजारवाद के कारण हिन्दी आजीविका का प्रमुख साधन बनती जा रही है। वैश्विक पटल पर इस भाषा की और अधिक मांग बढ़ाने हेतु हमें हिन्दी को पूरे मनोयोग से अपना होगा।

इस अवसर पर श्री राधा मोहन सिंह, माननीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री, भारत सरकार तथा डॉ. त्रिलोचन महापात्र, सचिव एवं महानिदेशक, कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग एवं भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली की ओर से हिन्दी दिवस पर जारी संदेशों का वाचन भी किया गया।

हिन्दी में निबन्ध लेखन प्रतियोगिता

हिन्दी पखवाड़ा 2017 के अंतर्गत दिनांक 16.09.2017 को हिन्दी में निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इस प्रतियोगिता में प्रथम स्थान पर डॉ. राकेश रंजन, द्वितीय स्थान पर श्री हरपाल सिंह तथा तृतीय स्थान पर श्री दिनेश मुंजाल रहे। डॉ. बसन्ती ज्योत्सना, डॉ. वेद प्रकाश (अ वर्ग में), डॉ. बलदेव दास किराडू (ब वर्ग में) तथा श्री सुखदेव प्रजापति (स वर्ग में) को प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त हुआ।

हिन्दी में वाद-विवाद प्रतियोगिता

दिनांक 22.09.2017 को हिन्दी में वाद–विवाद प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। 'वैश्विककरण के इस दौर में हिन्दी की स्थिति में सुधार आया है' विषयक इस प्रतियोगिता में निर्णायक के रूप में डॉ. शालिनी मूलचन्दानी, विभागाध्यक्ष (हि.सा.), राजकीय डूंगर महाविद्यालय, बीकानेर तथा डॉ. गौरव बिस्सा, एसोसिएट प्रोफेसर, राजकीय अभियान्त्रिकी महाविद्यालय, बीकानेर को आमन्त्रित किया गया। प्रतियोगिता के अंत में जहां डॉ. शालिनी मूलचन्दानी ने हिन्दी भाषा की वैश्विक स्थिति को स्पष्ट किया वहीं डॉ. गौरव बिस्सा ने प्रतियोगिता संबंधी महत्वपूर्ण पहलूओं की ओर प्रतिभागियों का ध्यान खींचा। इस प्रतियोगिता

प्रतिभागी अपने विचार प्रस्तुत करते हुए

में प्रथम स्थाान पर श्री हरपाल सिंह, द्वितीय स्थान पर डॉ. वेद प्रकाश तथा तृतीय स्थान पर श्री दिनेश मुंजाल रहे। डॉ. बसन्ती ज्योत्स्ना (अ वर्ग में), डॉ. राकेश कुमार पूनियां (ब वर्ग में) तथा श्री माणक लाल किराडू (स वर्ग में) को प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त हुआ।

हिन्दी के सामान्य ज्ञान पर आधारित प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता

पखवाड़ा गतिविधियों के तहत दिनांक 23.09.2017 को हिन्दी के सामान्य ज्ञान पर आधारित प्रश्नोतरी प्रतियोगिता आयोजित की गई। इस प्रतियोगिता में प्रथम स्थान पर डॉ. बलदेव दास किराडू, द्वितीय स्थान पर श्री राधाकृष्ण वर्मा तथा तृतीय स्थान पर डॉ. राकेश रंजन रहे। डॉ. वेद प्रकाश (अ वर्ग में), श्री भरत कुमार आचार्य तथा श्री सुखदेव प्रजापति (स वर्ग में) को प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त हुआ।

प्रतिभागी सामान्य ज्ञान प्रश्नोत्तरी की परीक्षा देते हुए

हिन्दी में शोध पत्र वाचन प्रतियोगिता

राजभाषा के बेहतर कार्यान्वयन हेतु समय–समय पर परिषद से प्राप्त निर्देशों को ध्यान में रखते हुए हिन्दी पखवाड़ा की गतिविधियों में दिनांक 23.09.2017 को शोध पत्र वाचन प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। प्रतिभागियों के स्थान निर्धारण हेतु डॉ. एच.के. नरूला, प्रधान वैज्ञानिक, केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान, बीकानेर तथा डॉ. मीरा श्रीवास्तव, विभागाध्यक्ष, जन्तु विज्ञान, राजकीय डूंगर महाविद्यालय, बीकानेर को आमन्त्रित किया गया। निर्णायकों ने हिन्दी में शोधपत्र प्रस्तुतीकरण संबंधी विभिन्न पहलुओं पर अपने विचार साझा किए। इस प्रतियोगिता में प्रथम स्थान पर डॉ. राकेश कुमार पूनियां, द्वितीय स्थान पर संयुक्त रूप से डॉ. राकेश रंजन एवं डॉ. वेद प्रकाश तथा तृतीय स्थान पर डॉ. शिरीष डी. नारनवरे रहे।

प्रतिभागी द्वारा शोध पत्र वाचन के दौरान

राजभाषा कार्यशाला

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर में मनाए जा रहे हिन्दी पखवाड़े (14–28 सित.) के अंतर्गत दिनांक 26.09.2017 को राजभाषा कार्यशाला का आयोजन किया गया।

कार्यशाला के प्रथम व्याख्यान सत्र में डॉ. अमित व्यास, वरिष्ठ होम्योपैथिक चिकित्सक, बीकानेर ने 'रेगिस्तानी पादपों से निर्मित होम्योपैथिक दवाएं और उनका स्वास्थ्य पर प्रभाव' विषयक व्याख्यान में कहा कि रेगिस्तानी क्षेत्र में पादपों के गुणधर्मों, अनुकूलनीय विशेषताओं के कारण इन्हें चिकित्सा हेतु प्रयुक्त किए जाने की अत्यधिक संभावनाएं हैं। डॉ. अमित व्यास ने रेगिस्तानी औषधीय पादपों जैसे खींप आदि का डाइबीटीज व प्रतिरक्षा तंत्र को मजबूत बनाने हेतु किए जाने की भी बात कही साथ ही इसके निष्कर्षण से होम्योपैथिक दवाएं तैयार कर ऊँटों के विभिन्न रोगों का उपचार किया जा सकता है।

कार्यशाला के दूसरे व्याख्यान में श्री जगमाल जी राईका, प्रगतिशील ऊँटपालक, गाढवाला, बीकानेर ने 'बदलते परिवेश में ऊँटों की उपयोगिता' में ऊँटों के गौरवशाली इतिहास एवं इससे जुड़ी मान्यताओं का हवाला

राजभाषा कार्यशाला में मंचस्थ अतिथि गण

केन्द्र निदेशक डॉ. पाटिल कार्यशाला संबोधन के दौरान

देते हुए कहा कि ऊँटों की उपयोगिता बढ़ाने एवं इस प्रजाति के संरक्षण हेतु ऊँटनी के दूध के औषधिक महत्व को बेहतर विकल्प के तौर पर अपनाना होगा। दूध के साथ–साथ पर्यटन, बाल, कुटीर उद्योग आदि की दृष्टि से इसका महत्व जानना समय की मांग है। उन्होंने इस अवसर पर कविता के माध्यम से देश एवं संस्कृति से जुड़ने की बात कही।

राजभाषा कार्यशाला में केन्द्र के निदेशक एवं कार्यक्रम अध्यक्ष डॉ. एन.वी. पाटिल ने निष्णात वक्ताओं के विचारों को आत्मसात करने हेतु प्रोत्साहित करते हुए कहा कि हमें हिन्दी भाषा के प्रयोग को गौरव के रूप में लेना होगा। उन्होंने कहा कि जब भाषा का प्रवाह शिखर से होता है तो वह अधिक तीव्र गति से प्रसारित होती है। डॉ. पाटिल ने भाषा के प्रयोग हेतु व्यावहारिक पक्षों की ओर प्रतिभागियों का ध्यान खींचते हुए आवश्कता व परिस्थिति अनुरूप शब्दों को प्रयुक्त किया जाना चाहिए।

इस अवसर पर विशिष्ट अतिथि डॉ. ए.के. पटेल, अध्यक्ष, केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान, बीकानेर ने भी हिन्दी भाषा के प्रभाव को सदन के समक्ष रखा। डॉ. ए.के. नागपाल, प्रभारी राजभाषा ने कार्यशाला के महत्व एवं उद्देश्य पर प्रकाश डाला एवं धन्यवाद ज्ञापित किया।

हिन्दी पखवाड़ा 2017 का पुरस्कार वितरण एवं समापन समारोह

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर में हिन्दी दिवस, 2017 के उपलक्ष्य पर आयोजित हिन्दी पखवाड़े का पुरस्कार वितरण/समापन समारोह रखा गया। केन्द्र में (14–28 सितम्बर) तक चले इस हिन्दी पखवाड़े के समापन समारोह के मुख्य अतिथि डॉ. उमाकांत गुप्त, प्राचार्य, एम.एस. कॉलेज, बीकानेर तथा विशिष्ट अतिथि श्री जसवंत खत्री, अधीक्षण अभियंता, सार्वजनिक निर्माण विभाग, बीकानेर थे। कार्यक्रम की अध्यक्षता केन्द्र निदेशक डॉ. एन.वी. पाटिल ने की।

हिन्दी पखवाड़े के पुरस्कार वितरण/समापन समारोह के मुख्य अतिथि डॉ. उमाकान्त गुप्त ने कहा कि किसी भी देश की पहचान पहले भाषा, फिर उसकी संस्कृति से होती

अतिथि गण अपने विचार प्रकट करते हुए

है। हिन्दी विश्व की ऐसी भाषा है जो कि संस्कृति की छवि रखती है, इसमें स्वर एवं व्यजनों की क्रमिकता शानदार है, पर्याप्त शब्द संपदा है। इसमें विश्व की सभी भाषाओं का उच्चारण हो सकता है, अतः हिन्दी भाषा को गौरव के रूप में लिया जाना चाहिए। उन्होंने हिन्दी भाषा की आधुनिक व बाजारवाद की स्थिति को सदन के समक्ष रखते हुए इसे रोजगार दिलाने वाली भाषा बताया तथा कहा कि इसकी लिपि कम्प्यूटर पर भी सटीक बैठती है।

कार्यक्रम के विशिष्ट अतिथि श्री जसवंत जी खत्री ने कहा कि भाषा संवाद की गहराई व उसकी स्पष्टता के लिए है। व्यक्ति द्वारा उच्चारित 'संबोधन' हमारे अन्तस को खटखटाते हैं। उन्होंने कहा कि हिन्दी, हिन्दुस्तानियों को 'माटी' से जोड़ती है। अतः अधिकांश क्षेत्र में सुनी/समझी जाने वाली हिन्दी भाषा को लोक भाषा/व्यवहार का हिस्सा बनाया जाना ही चाहिए।

इस अवसर पर केन्द्र निदेशक डॉ. एन.वी. पाटिल ने हिन्दी पखवाड़ा–2017 के अंतर्गत आयोजित प्रतियोगिताओं के विजेताओं को बधाई देते हुए कहा कि हिन्दी पखवाड़ा जैसे आयोजन नितांत आवश्यक है अपने आप को समझने/ढालने/कार्य प्रकृति में लाने के लिए। जब आप अपने कार्यक्षेत्र/व्यवहार में इसे अधिकाधिक अपनाएंगे तो प्राप्त ज्ञान/अनुभव का यह निचोड़, हिन्दी भाषा के माध्यम से एक कड़ी बनकर प्रवाहित होगा जो अन्ततः हमारे ऊँट पालकों को लाभ दिलाएगा।

इस अवसर पर प्रभारी राजभाषा डॉ. अशोक कुमार नागपाल ने पूरे पखवाड़े की गतिविधियों को सदन के समक्ष रखा। हिन्दी पखवाड़े का पुरस्कार वितरण/समापन समारोह कार्यक्रम का संचालन श्री हरपाल सिंह कौण्डल ने किया। धन्यवाद प्रस्ताव श्री नेमीचंद बारासा ने दिया।

प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कृत करते हुए अतिथि गण

राजभाषा कार्यशालाएं

राजभाषा कार्यशाला: 13 अक्टूसबर, 2017

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर में राजभाषा नीति कार्यान्वयन के निर्धारित लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए वर्ष 2017–18 की तृतीय कार्यशाला का आयोजन दिनांक 13 अक्टूबर, 2017 को केन्द्र सभागार में किया गया। इस कार्यशाला में जीओजीत फाइनेंसियल सर्विसेज, बीकानेर के श्री अभिषेक सिंह, क्षेत्रीय प्रबंधक ने 'सामान्य वित्तीय प्रबंधन' विषयक व्याख्यान प्रस्तुत किए गए। कार्यक्रम की अध्यक्षता केन्द्र निदेशक डॉ. एन.वी.पाटिल ने की।

राजभाषा कार्यशाला: उद्देश्य व महत्व

कार्यशाला सत्र प्रारम्भ से पूर्व केन्द्र के प्रभारी राजभाषा डॉ. अशोक कुमार नागपाल द्वारा कार्यशाला के उद्देश्य एवं महत्व पर प्रकाश डालते हुए सदन में बताया कि भारत सरकार की राजभाषा नीति के सफल क्रियान्वयन हेतु केन्द्र में नियमित रूप से प्रत्येक तिमाही में एक कार्यशाला का आयोजन अपेक्षित है। निर्धारित लक्ष्य प्राप्ति हेतु इस वित्तीय वर्ष की यह तृतीय कार्यशाला है। प्रभारी राजभाषा ने कहा कि केन्द्र द्वारा राजभाषा कार्यशालाओं में प्रस्तुत व्याख्याानों के माध्यम से अपने अधिकारियों एवं कर्मचारियों को राजभाषा प्रयोग में आने वाली बाधाओं, शंकाओं का निराकरण किया जाता है साथ ही भाषायी दृष्टिकोण से प्रतिभागियों के बौद्धिक ज्ञान में अभिवृद्धि का भी प्रयास किया जाता है। इसके अलावा इन कार्यशालाओं में विविध व उपयोगी विषय भी शामिल किए जाते हैं। जिससे विद्वजनों द्वारा प्रस्तुत विविध विषयक व्याख्यानों से प्रतिभागियों के ज्ञान में अभिवृद्धि हो सके।

व्याख्यान सत्र

जीओजीत फाइनेंसियल सर्विसेज, बीकानेर की ओर से चलाए जा रहे निवेशक जागरूकता संबंधी अभियान को ध्यान में रखते हुए सभी अधिकारियों/कर्मचारियों के हितार्थ यह कार्यशाला आयोजित की गई। 'सामान्य वित्ती य प्रबंधन' विषय पर आयोजित इस कार्यशाला में कम्पनी के श्री अभिषेक सिंह, रिजनल मैनेजर ने वित्तींय प्रबंधन के बारे में बोलते हुए कहा कि निवेशक के लिए यह देखना निहायत जरूरी है कि वह अपने पैसे को किस प्रकार निवेश करें ? वह राशि सुरक्षित रहने के अलावा उसकी वापसी दुगनी हो। निवेश करते समय ब्याज दर का विशेष ध्यान रखना चाहिए। उन्होंने कहा कि अगर हम 20 साल तक अपने वेतन का 15 प्रतिशत जमा करते रहे तो आगे के जीवन में कमाई का जरिया ही यह जमा राशि हो जाएगी। अतः योजना के तहत अपनी मेहनत की कमाई का निवेश किया जाना चाहिए।

इस अवसर पर जीओजीत फाइनेंसियल सर्विसेज के सहायक प्रबंधक श्री नीरज कुमार बिश्नोई ने भी अपने विचार रखे। उन्होंने कहा कि आज बाजार में निवेश के कई अवसर उपलब्ध है लेकिन किसी ऐसे एक विकल्प को चुनने के लिए जिससे की निवेशक को अच्छा रिटर्न मिल सके, एक मार्गदर्शक और विशेषज्ञ सलाह की आवश्यकता होती है। उन्होंने अपनी कम्पनी का हवाला देते हुए कहा कि जीओजीत भारत में एक अग्रणी वित्तीय सेवा कम्पनी है जो कि मध्य पूर्व के देशों में अपनी बढ़ती उपस्थिति दर्ज करवा रही है।

व्याख्यान सत्र के पश्चात प्रतिभागियों की ओर से निवेश आदि से जुड़ी विभिन्न शंकाओं का उचित निराकरण प्रस्तुत किया गया साथ ही अधिक जानकारी हेतु उन्हें प्रसार सामग्री वितरित की गई।

इस अवसर पर केन्द्र के निदेशक डॉ. एन.वी. पाटिल ने कहा कि आज हिन्दी भाषा संवाद स्थापित करने का एक सशक्त जरिया बनती जा रही है तथा देश के जनसाधारण में रची–बसी इस भाषा को अपनाने हेतु बहुराष्ट्रीय कम्पनियां भी खासा उत्साहित है, क्योंकि बाजारवाद के रहते कम्पनियों द्वारा अपने उत्पादों की सही व विस्तृत जानकारी उपभोक्ता/निवेशकों तक पहुंचानी है ऐसे में यह भाषा एक योजक का काम कर रही है। उन्होंने स्पष्ट किया कि राजभाषा से जुड़े विषयों के साथ–साथ बहुआयामी विषयों को भी कार्यशालाओं में सम्मिलित करने के पीछे मुख्य ध्येय प्रतिभागियों को विविध विषयों की जानकारी देकर उनके ज्ञान में अभिवृद्धि करना है।

केन्द्र में आयोजित इस कार्यशाला कार्यक्रम का संचालन श्री नेमीचंद बारासा, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी (रा.भा.) ने किया।

राजभाषा कार्यशाला: 21 मार्च, 2018

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर में राजभाषा नीति कार्यान्वयन के निर्धारित लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए वर्ष 2017–18 की अंतिम तिमाही कार्यशाला का आयोजन 21 मार्च, 2018 को समिति कक्ष में किया गया। इस कार्यशाला में अतिथि वक्ता के रूप में श्री सुनील कुमार, राजभाषा अधिकारी, भारतीय स्टैट बैंक, प्रशासनिक कार्यालय, बीकानेर को आमन्त्रित किया गया। कार्यशाला कार्यक्रम की अध्यक्षता केन्द्र निदेशक डॉ. एन.वी. पाटिल ने की।

राजभाषा कार्यशाला: उद्देश्य व महत्व

कार्यशाला सत्र प्रारम्भ से पूर्व केन्द्र के प्रभारी राजभाषा डॉ. अशोक कुमार नागपाल कार्यशाला के उद्देश्य् एवं महत्व पर प्रकाश डालते हुए सदन में बताया कि भारत सरकार की राजभाषा नीति के सफल क्रियान्वयन हेतु केन्द्र में नियमित रूप से प्रत्येक तिमाही में एक कार्यशाला का आयोजन अपेक्षित है। प्रभारी राजभाषा ने कहा कि केन्द्र द्वारा राजभाषा कार्यशालाओं में प्रस्तुकत व्याख्यानों के माध्यम से अपने अधिकारियों एवं कर्मचारियों की राजभाषा प्रयोग में आने वाली बाधाओं, शंकाओं का निराकरण किया जाता है साथ ही भाषायी दृष्टिकोण से प्रतिभागियों के बौद्धिक ज्ञान में अभिवृद्धि का भी प्रयास किया जाता है। इसके अलावा इन कार्यशालाओं में विविध व उपयोगी विषय भी शामिल किए जाते हैं। जिसमें विद्वजनों द्वारा प्रस्तुत विविध विषयक व्याख्यानों में प्रतिभागियों के ज्ञान में अभिवृद्धि हो सके।

व्याख्यान सत्र

अतिथि वक्ता श्री सुनील कुमार ने 'प्रयोजनमूलक हिन्दी और कार्यालय' विषयक अपने व्याख्यान में बताया कि अनुसंधान में दो प्रकार के राजभाषा के कार्य हो सकते हैं–प्रशासनिक और अनुसंधान विषयक। उन्होंने संस्थान की गतिविधियों के संबंध में बोलते हुए कहा कि केन्द्र में प्रशासनिक विषयक कार्यों को राजभाषा प्रावधान के अनुरूप किया जा रहा है साथ ही अनुसंधान विषयक कार्यों में भी राजभाषा को प्राथमिकता प्रदान की जाती है। इसे अधिकाधिक बढ़ाने हेतु अनुसंधान के प्रयोजन के अनुसार हिन्दी की सरल पारिभाषिक शब्दावली को प्रयोग में लाया जाना चाहिए और भारत सरकार की भी सभी संस्थानों से यह अपेक्षा है कि वे क्षेत्रीय और अन्य भाषाओं के प्रचलित शब्दों को भी तरजीह दें। इससे अनुसंधान कार्यों को ऊँट पालकों व आमजन के बीच ले जाने में और ज्यादा मदद मिलेगी।

अपने अभिभाषण के अंत में श्री सुनील कुमार ने कहा कि राजभाषा हिन्दी में काम करना बिल्कुल वैसा ही है जैसे रात को 'रात' कहना और रात को 'रात' कह देना इतना मुश्किल भी नहीं है।

कार्यक्रम अध्यक्ष एवं केन्द्र निदेशक डॉ. एन.वी. पाटिल ने कहा कि केन्द्र द्वारा राजभाषा हिन्दी के माध्यम से अनुसंधान गतिविधियों के प्रचार–प्रसार में महत्वपूर्ण सहयोग प्राप्त हो रहा है। राजभाषा कार्यशालाओं में ऐसे विषय सम्मिलित किया जाना नितांत आवश्यक है। ऐसे विषयों के माध्यम से संस्थान अपने कार्यक्षेत्र में और अधिक सम्बद्धता प्रकट करते हुए अनुसंधान उपलब्धियों एवं गतिविधियों को प्रभावी ढंग से ऊँट पालकों के समक्ष रख सकेगा।

डॉ. पाटिल ने केन्द्र वैज्ञानिकों को प्रोत्साहित करते हुए कहा कि राजभाषा हिन्दी के अधिकाधिक प्रयोग से संस्थान अपनी उपयोगिता को सिद्ध करने की दिशा में सतत रूप से अग्रसर रहेगा।

व्याख्यान के अंत में वैज्ञानिकों एवं अधिकारियों ने सक्रिय सहभागिता निभाते हुए अपनी जिज्ञासाओं एवं समस्याओं को अतिथि वक्ता श्री सुनील कुमार के समक्ष रखा जिनका उचित निराकरण प्रस्तुत किया गया।

प्रभारी राजभाषा डॉ. अशोक कुमार नागपाल ने कार्यशाला के उद्देश्य एवं महत्व पर प्रकाश डाला। कार्यशाला कार्यक्रम का संचालन श्री नेमीचंद बारासा, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी (राजभाषा) ने किया।

राजभाषा कार्यशाला: 19 जून, 2018

भाकृअनुप–राष्टीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र में दिनांक 19 जून, 2018 को राजभाषा कार्यशाला का आयोजन किया गया। योग संबंधी विषय 'स्वस्थ एवं सुखी जीवन हेतु योग का महत्व' पर आयोजित इस कार्यशाला में अतिथि वक्ता के रूप में देवेन्द्र योग संस्थान, बीकानेर के मुख्य प्रबंधक डॉ. देवाराम काकड़ को आमन्त्रित किया गया।

राजभाषा कार्यशाला : उद्देश्य व महत्व

कार्यशाला सत्र प्रारम्भ से पूर्व केन्द्र की प्रभारी राजभाषा डॉ. बसंती ज्योत्सना ने कार्यशाला के उद्देश्य एवं महत्व पर प्रकाश डालते हुए बताया कि भारत सरकार की राजभाषा नीति के सफल क्रियान्वयन हेतु राजभाषा कार्यशालाओं का मुख्य उद्देश्य अधिकारियों एवं कर्मचारियों को राजभाषा के उत्तरोत्तर प्रयोग हेतु प्रोत्साहित करने, राजभाषा प्रयोग के दौरान होने वाली झिझक को दूर करते हुए बाधाओं/शंकाओं का उचित निराकरण प्रस्तुत करना होता है। चूंकि यह केन्द्र 'क' क्षेत्र में स्थित है तथा केन्द्र हिन्दी ज्ञान स्तर के अनुसार एक अधिसूचित कार्यालय है अतः इसे दृष्टिगत रखते हुए केन्द्र में आयोजित कार्यशालाओं में राजभाषा के माध्यम से विविध महत्वपूर्ण विषयों/विधाओं पर भी व्याख्यान रखे जाते हैं ताकि अधिकारियों/कर्मचारियों के ज्ञान में अभिवृद्धि की जा सके।

व्याख्यान सत्र

व्याख्यान सत्र में अतिथि वक्ता डॉ. देवाराम काकड़ ने योग के महत्व पर अपनी बात रखते हुए कहा कि संपूर्ण विश्व आज योग को लेकर भारत की ओर आशाभरी नजरों से देख रहा है। क्योंकि भारत का प्रत्येक व्यक्ति योग का भलीभांति महत्व जानता है। योग हेतु वैश्विक सहमति इस बात का द्योतक है।

अतिथि वक्ता ने सदन में उपस्थित अधिकारियों को कहा कि यदि हमें सकारात्मक बदलाव लाना है, न केवल शारीरिक अपितु मानसिक दृष्टि से भी मजबूत बनना है तो योग को अपनाना होगा, क्योंकि योग मानव शरीर को स्वस्थ रखने में सक्षम है। उन्होंने बदलते परिवेश में मानवीय जीवन शैली, चरित्र निर्माण आदि विभिन्न पहलुओं पर बात रखते हुए प्राणायाम, अनुलोम–विलोम, जल नैति एवं धोती आदि यौगिक आसनों/क्रियाओं के द्वारा स्वस्थ होने के गुर सिखाए। अंत में डॉ. काकड़ ने योग से स्वस्थ होकर राष्ट्र की सेवा हेतु प्रेरित किया।

इस अवसर पर केन्द्र के निदेशक डॉ. एन.वी. पाटिल ने कहा कि हम आज केवल भौतिकता की चकाचौंध में आत्मिक शांति से दूर होते जा रहे हैं, जबकि हमारा असली धन तो यही है। यदि हम शारीरिक/मानसिक/भावुक दृष्टि से स्वस्थ नहीं हैं तो हम सही रूप में स्वस्थ नहीं है। अगर संतुलित स्वरूप में हमें जीवन निर्वाह करना है तो हमें योग का सहारा लेना ही होगा। डॉ. पाटिल ने कहा कि जब आज दुनिया के देश योग का महत्व जान गए हैं तो विश्व गुरू भारत का दायित्व और अधिक बढ गया है।

डॉ. पाटिल ने जोर देकर कहा कि योग में वह शक्ति है जिससे बदलाव लाया जा सकता है। अतः पहले अपने आपको ठीक करते हुए प्रतिनिधित्व स्वरूप में योग का संदेश पूरे भारत में फैलाएं।

इस अवसर पर केन्द्र के प्रधान वैज्ञानिक डॉ. सुमन्त व्यास ने 21 जून, 2018 को आयोज्य योग दिवस पर केन्द्र की सहभागिता के संबंध में अपनी बात रखी। कार्यशाला कार्यक्रम का संचालन श्री नेमीचंद बारासा, स.मु.तक. अधिकारी (रा.भा.) ने किया।

अतिथि वक्ता डॉ. देवाराम व्याख्यान प्रस्तुत करते हुए

केन्द्र निदेशक डॉ. पाटिल सभा को संबोधित करते हुए

केन्द्र को मिला राजभाषा सम्मान

वर्ष 2017–18 के दौरान नगर में राजभाषा के उत्कृष्ट प्रयोग के लिए राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान संस्थान, बीकानेर को प्रशस्ति पत्र प्रदान किया गया। मंडल रेल प्रबन्धक, बीकानेर के कार्यालय में दिनांक 11 जुलाई, 2018 को आयोजित नराकास, बीकानेर की इस बैठक में अध्यक्ष, नराकास, बीकानेर के श्री अनिल कुमार दुबे, मं.रे.प्र. द्वारा केन्द्र के निदेशक डॉ. एन.वी. पाटिल को यह प्रशस्ति पत्र प्रदान किया गया।

भारत सरकार

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, बीकानेर

प्रशस्ति-पत्र

वर्ष 2017-18 के दौरान नगर में राजभाषा के उत्कृष्ट प्रयोग के लिए राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान संस्थान, बीकानेर को प्रशस्ति-पत्र प्रदान किया जाता है।

(अनिल कुमार दूबे)
अध्यक्ष, नराकास एवं
मंडल रेल प्रबंधक

दिनांक 11-07-2018

केन्द्र को राजभाषा सम्मान प्रदान करते हुए

करभ पत्रिका का लोकार्पण

हिन्दी प्रकाशनों की सूची

1. राजभाषा पत्रिका करभ अंक : 15
2. वार्षिक प्रतिवेदन (2016–17) हिन्दी व अंग्रेजी में अलग–अलग
3. भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र (हिन्दी व अंग्रेजी में)–विस्तार पत्रक
4. क्यों पिएं ऊँटनी का दूध ? (हिन्दी व अंग्रेजी में) –विस्तार पत्रक

भाकृअनुप
ICAR

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch